



# विज्ञान और विश्वविद्यालयः

श्री० एच० कोठारी

साहित्य सगम, आगरा

प्रमुख वितरक  
गयाप्रसाद एण्ड सँस  
सिटी स्टेसन रोड बापरा

लेखक	डा० बीनतसिंह कौशरी भायरा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग
प्रकाशक	साहित्य सभस प्रसार परिषद, सिटी स्टेसन रोड बापरा
मुद्रक	एडुकेसनल प्रेस बापरा [ प्रेम : २७७२ ]
मूल्य	१ रुपया
आवरण	एफारमा स्टुडियो, दिल्ली
संस्करण	नवम्बर, १९६३

## अपनी बात

यह पुस्तक डा. बी. एम. कोठारी के इन भाषनों का संकलन है जो उन्होंने पिछले दो तीन वर्षों में समय-समय पर दिये हैं। इनमें से कुछ भाषण लेखों के रूप में हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं और पुस्तक के अन्य लेख उनके अंग्रेजी भाषनों का हिन्दी रूपान्तर है। अभी तक डा. साहू के इन भाषनों का संकलन मूल अंग्रेजी में भी प्रकाशित नहीं हुआ है। अंग्रेजी से भी पहले हिन्दी में इस पुस्तक की प्रकाशित करने की डा. साहू द्वारा अनुमति प्रदान करना इस बात का प्रमाण है कि वे भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक साहित्य के निर्माण की प्रक्रिया को अत्यधिक प्रोत्साहन और प्रेरणा देते हैं। इसके लिये हिन्दी जगत उनका हृदय से आभारी है, क्योंकि आपने इन लेखों में मानव समाज की सभी गतिविधियों को विज्ञान के माध्यम द्वारा प्रस्तुत किया है। सचमुच में हिन्दी साहित्य को हमसे एक नया दृष्टिकोण मिला है।

लेखों की विषय सामग्री को देखते हुए इस पुस्तक को तीन खण्डों में विभाजित किया गया है (१) विज्ञान और विषयविषय (२) विज्ञान और प्रतिरक्षा और (३) विज्ञान साहित्य और मानव। पुस्तक का नाम

प्रमुख वितरक  
पयाप्रसार एण्ड सीस  
सिटी स्टेसन रोड बागरा

लेखक डा० दीनदत्त सिंह कोठारी  
सम्पादक  
वित्तविद्यालय जमुवान बायोस

प्रकाशक साहित्य संघ  
सम्पादक शरिफ  
सिटी स्टेसन रोड बागरा

मुद्रक एन्ड्रुकेयनल प्रेस बागरा  
[ वोल १ १९५२ ]

मूल्य ३ रुपया

आधारण एकारमा लुडियो, दिल्ली

तस्वरूप नवम्बर, १९५१



डा० छाहूब के भारतीय विज्ञान काँग्रेस के पचासवें सम्मेलन के अध्यक्षीय भाषण के नाम पर रसा गमा है जो पुस्तक का प्रथम संस्करण भी है।

डा० छाहूब के विचारों को हिन्दी में प्रस्तुत करते समय भाषा की सरलता का काफी ध्यान रखा गया है पर उनके महान् वैज्ञानिक विचारों को व्यक्त करते समय फिर भी कहीं-कहीं भाषा कठिन और डुबडुबी हो गई है। मूलों में भी पुनरावृत्ति के उन दोषों को काफी कम करने की कोशिश की गई है जो भाषणों में आने स्वाभाविक होते हैं।

हम इसे अपने सिये परम सीमाम्य की बात मानते हैं कि देश के प्रमुख वैज्ञानिक-विचारक डा० कोट्यरी के विचारों को सबसे पहले हिन्दी साहित्य में लाने का सीमाम्य हम प्रान्त हुआ है। आशा है हिन्दी पाठक इसका स्वागत करेंगे। हमारी योजना है कि हम इस पुस्तकमाला के अन्तर्गत देश के अन्य प्रसिद्ध वैज्ञानिकों के विचारों को भी प्रकाशित कर सकें।

प्रकाशक

# विषय-सूची

## भाग 1 विज्ञान और विश्वविद्यालय

### 1 विज्ञान और विश्वविद्यालय

सहयोग-प्रधान विज्ञान विज्ञान के विकास की गति  
कमीर और गरीब क्षेत्र विज्ञान की प्रगति के  
बीच विज्ञान और दृष्टि वैज्ञानिक जनशक्ति  
और विद्या अनुसंधान व्यय विज्ञान और  
मानवता पाठ्यक्रम में प्रति जिज्ञासा और वैज्ञानिक  
परम्परा का वातावरण विज्ञान में सहयोगी भावना  
प्रशासकों के बटवारे में समुत्तम शिक्षा पर लक्ष्य  
उच्च शिक्षा और अनुसंधान केन्द्र ।

3

### 2 प्राचीन शिक्षा और विज्ञान

शिक्षा की प्राचीन परम्परा उच्च शिक्षा एकटै ज्ञान  
के धातुनिक केन्द्र विज्ञान का भयंकर रूप ।

41



### 3. विज्ञान और इतिहास

इतिहासकार और शैक्षिक शास्त्री विज्ञान का इतिहास मानवतावादी वैज्ञानिक क्षेत्र में राष्ट्रीय रैन वैज्ञानिक चान्ति का आरम्भ । 48

### 4. विज्ञान और चिकित्सा शास्त्र

मध्य पुगीय योरोप में चिकित्सा विज्ञान की बहुमुत प्रवृत्ति भारत की यौरवमयी परम्परा में चिकित्सा शास्त्र में ऐसी पल कुछ काम की बाते । 56

## भाग 2 विज्ञान और प्रतिरक्षा

### 5. विज्ञान और प्रतिरक्षा

वैज्ञानिक और शैक्षिक अधिकारी प्रतिरक्षा अनुसंधान प्रतिरक्षा विज्ञान के उद्देश्य सेवा और वैज्ञानिकों का उद्देश्यीय पूरककृत सिद्धांत विभिन्न शास्त्र प्रमाणी प्रति रक्षा विज्ञान पर म्यय जाणविक अक्ष । 69

### 6. वर्तमान संकट और शिक्षा

हृषाटी प्रतिज्ञा आधुनिक संसार और विज्ञान जीवन छात्र की प्रतिभा बड़े केन होने का कारण विद्या समन्वित हो अनुसंधान-निष्ठ अम्प्याणक विद्या के राष्ट्रीय मान ध्वंस का विघट रूप । 94

- 7 मानव और परमाणु बिस्फोट सम्पत्ता के बिस्फुट होने का कारण नवाग्रह स्थिति का कारण परमाणु बिस्फोट की विनाश का साध्य नृत्य घनघोर रूप से ममानक नडाई अयंकर नतीजे मह संहारक कुय अन्य पृथ्वी पर भी कुय रोकने के लिए सामूहिक प्रयत्न । 109

### भाग 3 विज्ञान, साहित्य और मानव

- 8 वैज्ञानिक सम्भावनी वैज्ञानिक प्रपत्ति का आधार, स्वी और अंग्रेजी बरुटे पारिभाषिक सम्भावनी अंतर्राष्ट्रीय सम्भावनी वैज्ञानिक सम्भावनी और भारतीय भाषाये विज्ञान का माध्यम क्षेत्रीय भाषाओं में सम्भावनियों सिप्याठरण नही धरदावनी की योजना । 125
- 9 भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक साहित्य हाथ और विषय का मिलन महिसारें बचित प्रय क्यों विज्ञा य अंग्रेजी का स्वान विस्वविद्यालय और अंग्रेजी विद्या का माध्यम । 145
- 0 मानव और विज्ञान मानव समाज की सामूहिक प्रतिया कुयन अरुचि वैज्ञानिक सोच और मनुष्य ।



वि  
ज्ञा  
न

और

वि  
श्व  
वि  
द्या  
ल  
य

की वायु 20-30 अरब साल यार्ने ठो समयग मूरक  
 10 अरब साल पुपता है और इसकी वायु इतनी ही और  
 होकी । इसरी ओर बहुत कमकवार कीं टाइप के तारे की  
 वायु कुछ 10 साल साल ही है । मूरक की रासायनिक  
 रचना से यह मानूम होठा है कि यह बड़ाग्न सूजन के  
 इसरे चरण मे या इससे बाद के चरण में बना हो । सूजन  
 के प्रथम चरण मे तारे मूमतः विमुक्त हाइड्रोजन के बने थे ।  
 इन तारों में स्थित हाइड्रोजन अत्यधिक गर्मी के कारण  
 इसरे मूमतकों मे—हीलियम से यूरेनियम तक—बबल पई ।  
 इनमें से कुछ तारे विस्फोटित होकर उनके अन्दर का पदार्थ  
 अन्तरिक्ष में बिलर गया । इनके बिखरे इस पदार्थ मे हमरे  
 चरक में बनने वाले तारों के अन्दर प्रवेश कर लिया । इन्हीं  
 मे से एक हमारा मूरक भी है । हमारी पृथ्वी को अपना  
 वर्तमान रूप आज से 5 अरब साल पहले मिला । हमारी  
 पृथ्वी पर सबसे आदिम जीव 2 अरब साल पहले पैदा  
 हुए, आदिम-चिड़िया और स्तनवादी जीव 20 करोड़  
 साल पहले पैदा हुए और आदमी का समयमे 10-20 लाख  
 साल पहले पदार्थन हुआ । येही 10 हजार साल मे पुरानी  
 नहीं मानूम पड़ती और आदमी ने जिवि का आबिप्यार  
 समयमे 6 हजार साल पहले किया । विज्ञान समुच्च के  
 आधिक सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक काठाकरण के महत्व  
 पूर्व काल के रूप में निहमी कुछ घटावियों से लिये है

"मनुष्य अब कुछ नियंत्रित रसायनों में एक ऐसे शक्ति-  
 स्रोत का विकास कर रहा है जो रासायनिक शक्ति (ऊर्जा)  
 न सार्वों करोड़ों गुना शक्तिशाली है। आपत्तिक शक्ति को  
 अपनी सेवा में समाने के लिये कना-कौशल व इस्तकारियों की  
 अपेक्षा पट्टी र्वट और सैदाभिक विज्ञान की पर्याप्त प्रगति  
 जरूरी है। ऐसा मामूम होठा है कि मनुष्य अब न केवल  
 'एक बिन्दु' का नागरिक बनने वाला है—बल्कि बह्याण्ड  
 का नागरिक बनने के लिये प्रयत्नशील है।" यह बह्याण्ड  
 भी कोई छोटी-मोटी चीज नहीं है। हमें अभी यह भी नहीं  
 पामूम कि बह्याण्ड उसीम है वा असीम। लेकिन रेडियो-  
 खनोल-शास्त्र में हुई अब तक की प्रगति से इस प्रस्न का  
 उत्तर कुछ ही बयों में मिलन की सम्भावना है। बह्याण्ड  
 के बिलने भाप का पठा समायो जा चुका है उत्तमें समय  
 19 अरब आकाश पयार्ये हैं और हरेक आकाश पया म 10  
 अरब ठारे हैं। एक जीवन आकाश पया का व्यास तपमग  
 एक मास प्रकाश बय है। (एक बय में प्रकाश 1,86,000  
 मील प्रति सैकंड की गति से बिलना चल पाठा है तप एक  
 प्रकाश-बय कहने हैं।) ठारों के बीच की र्वस प्रत्येक  
 आकाश पया के मार का 1-10 प्रतिगत तक होती है।  
 हाल में ही कुछ ऐसे ग्रह-मंडलों का पठा चला है जो हमारे  
 धीर परिवार से सम्बन्ध नहीं रखते। किसी भी ग्रह का  
 अधिकतम अर्धव्यास नृत्स्पति के अर्धव्यास से ज्यादा नहीं

हो सकता। वह तो प्रायः निश्चित ही है कि केवल इस पृथ्वी पर ही बुद्धिमान प्राणी नहीं रहते। सम्भव है कि निकट भविष्य में मनुष्य किसी प्रकार की अन्तरिक्ष-टेसीफोन व्यवस्था द्वारा अन्य लोकों से सम्पर्क स्थापित कर सके।

### सहयोग प्रधान विज्ञान

‘विज्ञान की असमी शक्ति सत्य को पाने के लिये सब कठोर और निरंतर प्रयत्नों में निहित है। आज से 100 वर्ष पहले विज्ञान की प्रयोगशालाएँ बहुत कम होती थीं और वे जड़ीबौ-मरीच नीच मानी जाती थीं। पर आज तो वे दुनिया भर में फैली हुई हैं।’ भारत में सबसे पहले विज्ञान कमकक्षा हिन्दू कासिब (प्रिंसीपैल्सी कासिब) में सन् 1870 में राजा राममोहन राय के नेतृत्व में बढ़ाया शुरू किया गया था। विज्ञान में कहीं कोई लोच होती है तो वह सभी की साथी सम्पत्ति बन जाती है। विज्ञान की माया वास्तव में सभी बौद्धान्तिक के लिये एव है और इसकी उपलब्धियाँ सम्पूर्ण मानव समाज की धरोहर हैं। विज्ञान की दुनिया उन्मुक्त है और विज्ञान मुक्त प्रयत्नों से सम्बद्ध होने के बादबूढ़ भी केवल बोड़ी-सी पचभ्रष्टता को छोड़कर विज्ञान की दुनिया में कोई विधिय परिवर्तन नहीं हुआ है। विज्ञान की एकता का उदाहरण एकदम हमारे विमान में सभी कीच जाता है जब हम अटॉम के नूतन नूतन कर्षों को दो नामों से पुकारते हैं।

बाइरे के एस्कट्रोल हों ऐन्टी प्रोटोन हों या प्युट्रोन हों। एक  
 बर्ष के कम 'फरमिमोन्स' कहलाते हैं चूँकि ऐनरिको फर्मी  
 ने सबसे पहले दिसम्बर 1942 में इनका पता लगाया था।  
 दूसरे बर्ष के कर्षों को 'बोसोन' कहते हैं जिनका पता प्रोफेसर  
 सत्येन बोस ने लगाया था। बोस और फर्मी दोनों वैज्ञानिकों  
 ने सन् 1924 के करीब 'बनान्टम स्टेटिस्टिक्स' का  
 सबसे पहले अध्ययन किया था। विज्ञान में पहला स्वाग  
 सहयोग को है प्रतियोगिता को नहीं और विज्ञान की बुनि-  
 याद मनुष्य की उच्चतम महत्वाकांक्षाओं और सोप्यताओं  
 में निहित है। जैसे जैसे विज्ञान का विकास होता जाता है  
 त्यों त्यों अनुसंधान का काम ज्यादा देधीरा और महँगा  
 होता जाता है। विज्ञान में कोई कोई तो ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ  
 तमाम संसार भर के वैज्ञानिकों के समन्वित सहयोग की  
 आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए मनुष्य की  
 अन्तरिक्ष और दूसरे ग्रहों तक की उड़ान के लिए ऐसे  
 सहयोग की जरूरत है। मूलभूत कर्षों के बीच होने वाली  
 अन्तःक्रियाओं को जानने के लिए 10 बारक एस्कट्रोन बास्ट  
 के एक्सपेरिमेंटर की जरूरत होती है। इसके लिए भी तमाम  
 बुनिया के वैज्ञानिकों के सहयोग की जरूरत पड़ती है।  
 विज्ञान की मापक को एक प्रत्यक्ष रैत तो यही है  
 कि आनकस मानवीय जीवन की अखिल आयु तमाम संसार  
 में बढ़ गयी है और किसी किसी देश में तो आयु की अखिल



कुछ ही वर्षों पहले की अपेक्षा तीन गुनी तक ही गयी है।  
 जले ही बुनियाद भर में कितनी ही फूट हो उभर्य हो पर  
 यह बात तो निश्चित है कि संसार में पहली बार विज्ञान  
 के क्षेत्र में इतने बड़े पैमाने पर सहयोग हो रहा है  
 जितना कि पहले कभी नहीं हुआ था। दो वर्ष भी नहीं  
 हूँ कि संयुक्त राष्ट्र संघ ने एक प्रस्ताव पारित किया कि  
 बुनियाद के समूह देशों को कम विकसित देशों की मदद  
 करनी चाहिये ताकि उनकी राष्ट्रीय आर्थिक में 5 प्रतिशत  
 प्रति वर्ष की बढ़ती वर्तमान स्तर के अन्त तक हो जाय।  
 यदि 5 प्रतिशत बढ़ती को ध्यान में रखकर हिसाब फँसाया  
 जाय तो 15 वर्ष में आयु बुगनी हो जायेगी। हाल के कुछ वर्षों  
 में अमेरिका की वर्ष व्यवस्था का विकास लगभग 4 प्रतिशत  
 रहा है और वह न करीब इसका बुदना। ऊपर दिये हुए  
 मददों की प्राप्ति के लिये बहुत बड़ी सहायता की अर्थात् लग  
 बग 10 अरब डॉलर की वार्षिकीय मदद की आवश्यकता  
 पड़ेगी। यह सहायता समूह देशों की राष्ट्रीय आय का  
 कुछ प्रतिशत है। स्मरण रहे कि 10 अरब की यह  
 बग राशि समूह देशों के अतिरिक्त वार्षिक बजट का  
 बतर्वा भाग है। यदि संसार में निरस्त्रीकरण हो जाये तो  
 संसार आसानी से ज्यादा समृद्ध हो गयेगा।

आज के उभाव पर विज्ञान का इतना अचरित प्रभाव  
 पड़ा है कि हमने पहले मान्य इतिहास में कभी इतनी

अनिश्चितता बेलने में नहीं आई जितनी कि आज है।  
 इसकी खास बजह यही है कि विज्ञान की वैज्ञानिक लोचों  
 भी अनिश्चित होती हैं। सन् 1905 में आइन्स्टीन ने भार  
 और ऊर्जा को सम्बन्धित करन कासा  $E=mc^2$  नाम का  
 प्रसिद्ध समीकरण बनाया। क्या पता था कि उसके केवल  
 50 वर्षोंके अन्दर यह समीकरण महान् विध्वंसक बलु बसों  
 के बनाने में काम आया औरजिससे पुराने तयोंके की लड़ा  
 इयाँ बेकार सी लगने लगेयी। अमूठ जिसे हम प्राय बेकार  
 मानत हैं मूर्त तक पहुँचने का सबसे छोटा रास्ता है।  
 लेकिन पहले से इस रास्ते का पता नहीं चलता। मोटे तौर  
 पर हम विज्ञान के लिए योजना तैयार कर सकते हैं पर  
 स्वयं विज्ञान का समोजन नहीं किया जा सकता।

मानी घटनाओं की अनिश्चितता और मानव की स्वतंत्र  
 बुद्धि के सम्बन्ध में आइन्स्टीन के कुछ विचार उल्लेखनीय हैं

'मैं दार्शनिक तौर पर मानव की स्वतन्त्रता  
 में विश्वास नहीं करता। प्रत्येक व्यक्ति न केवल  
 बाहरी मजबूरी पर ही काम करता है बल्कि  
 आन्तरिक आवश्यकता के अनुसार भी काम करता  
 है। डॉपनहायर कहता है—जादमी जो चाहे तो  
 करता है लेकिन वह अपनी इच्छा वैसी नहीं बना  
 पाता वीसा कि वह चाहता है। आठव म मुझे  
 बचपन से ही इस बात ने बहुत प्रेरित किया है।

जब कभी अपनी या किसी और की विषयों मेरे सामने आयीं तो इस सूत्र ने मुझे बहुत सान्त्वना दी और इस सहिष्णुता का स्रोत कभी कम नहीं हुआ। इसी अनुभूति के कारण हमें उत्तरदायित्व का बोध कम मान्य होता है—वास्तव में यह एक विशेष दृष्टिकोण है जिससे जीवन में विनोद को भी स्थान मिलता है।

धर्म का कहना है कि स्वतन्त्रता के बारे में हमारी चारणा भ्रान्तिपूर्ण है। जब हम सोचते हैं कि हमने कोई काम अपनी मुक्त इच्छा से किया है तो वास्तव में उस काम को रोकने की जिम्मेदारी हम अचेतन मस्तिष्क पर छोड़ देते हैं और बाद में फल पाने के भेष का दावा करते हैं।

इतिहास में अनिश्चितता का तत्व तो विज्ञान के कारण ही घुसा है। बाकी को और ऐसे कुछ ही को वैज्ञानिक शक्ति की देन है यानि विज्ञान के विकास की गति और विश्वविद्यालयों की नयी उपयोगिता और उनका महत्वपूर्ण योग।

### विज्ञान के विकास की गति

जब विज्ञान के विकास की गति की ओर ध्यान दीजिए। विज्ञान की भाव तक की सारी सफलताएँ वास्तव में अद्भुत हैं। इन सफलताओं से ज्यादा अद्भुत है विज्ञान के

विज्ञान की वृत्ति। सी डी०एस०ग्राहस के अध्ययनके अनुसार  
 विज्ञान के अनेक मुख्य-विश्लेषों से पता चलता है कि पहले  
 दो सौ सालों में वैज्ञानिक ज्ञान और इससे सम्बन्धित चीजों  
 की प्रगति की औसत दर प्रति-वर्ष 5-7 प्रतिशत रही है।  
 इसके मतलब होते हैं कि इनकी दुगुन-अवधि 10 वर्ष है।  
 उदाहरण के तौर पर विज्ञान से सम्बन्धित पत्रिकाओं की  
 ही से लीजिए जो वैज्ञानिक ज्ञान की मापे बढ़ाने का मुख्य  
 साधन रही हैं। 1750 में कुछ ही वैज्ञानिक-पत्रिकाएँ थीं  
 या कि 1850 में बढ़कर 1000 हो गयीं और इस समय  
 उनकी संख्या लगभग 1,00,000 है। धार्यर हम सत्राब्दी  
 के अन्त तक इनकी संख्या 10 00 000 हो जाएगी। विज्ञान  
 बाँधस में पढ़े जाने वाले लेखों की बात में। 1914 के  
 सबसे पहले सम्मेलन में इनकी संख्या 35 थी। उस वर्ष  
 विज्ञान कांग्रेस की आय 883 रु० थी और व्यय 304 रु०  
 था। इसी प्रकार 1930 में एजत अयन्ती अधिवेशन में पढ़े  
 पर अनुसंधान लेख 900 थे जो कि 1962 के अधिवेशन में  
 1500 तक पहुँच गए। इन जाँचों के आधार पर इनकी  
 दुगुन अवधि 10 वर्ष से कम बैठती है। यह भी एक  
 विशिष्ट बात है कि विद्युत् 2 दशान्तियों में थोड़े से  
 मौलिक कर्मों की दुगुन-अवधि भी 10 वर्ष है। इसी दर के  
 वैज्ञानिकों की संख्या भी बढ़ रही है। वैज्ञानिकों की संख्या  
 सोठे तौर पर जब हाल तक उप अनुमान लेखों की एक

सिद्धाई होती है। पर इस बुद्धि का सम्बन्ध केवल ज्ञान के विस्तार और महत्ता से है न कि मस्तिष्क की शक्ति से। यह पक्की नहीं है कि मान का कोई आर्कमिटीय और आर्यमट्ट अपने पूर्ववर्ती वैज्ञानिकों से श्रेष्ठ बुद्धिवाला हो। यह बात सगमन जीवन की आयु की तरह ही है। यह माना कि जीवन की औसत आयु विज्ञान के कारण अब काफी बढ़ गई है। पर मनुष्य की अधिकतम आयु सगमन नहीं की गई है।

वैज्ञानिकों की पुन-अवधि 15 साल है। इसके मत सब यह होते हैं कि अब तक संसार में बितने वैज्ञानिक हुए हैं उनका 90 प्रतिशत आज भी जिया है। अब तक हम यह नहीं समझ पाए हैं कि विज्ञान की पुन-अवधि 10-15 वर्ष ही क्यों होती है। बाहिर है कि विकास की यह मर्यादक गति अनन्त काम तक नहीं चल सकती। यदि वैज्ञानिकों की संख्या अपने 10 वर्षों में भी वर्तमान गति से ही बढ़ती रही तो वैज्ञानिक सगमन संसार की दुर्लभ आबादी के बराबर हो जायेंगे जो असम्भव है। इसलिए देर या तब में वैज्ञानिकों के बढ़ने की गति कम हो जायेगी और सामान्य आदर में इसकी गति भी इतनी ही रह जायेगी जितनी जनसंख्या के बढ़ने की गति रह गई है। जो देश विज्ञान के क्षेत्र में सबसे आगे हैं उनमें आज इस तथ्य के दर्शन भी होने लगे हैं। विज्ञान के मर्यादक गति से बढ़ने

का एक नतीजा यह निकला है कि किसी बुनियादी ईजाद और उसको व्यावहारिक बनाने का समयान्तर बराबर पट्टा जा रहा है। पिछली सदी में इन दोनों के बीच का अन्तर कुछ हद तक था लेकिन अब यह एक हद तक से भी कम रह गया है जैसा कि ट्रांजिस्टर और लेजर की ईजाद और उसके व्यावहारिक उपयोग के समयान्तर से पता चलता है। "विज्ञान के बढ़ने की गति इतनी तेज है कि अब तक कोई वैज्ञानिक नजर छान कर आता है तब तक वह पुछना पड़ जाता है और अब तक किसी बड़े हथियार का बनाने का काम बड़े पैमाने पर शुरू होता है तब तक वह भी पुछना पड़ जाता है।

### अमीर और परीब देश

आज के युग में अमीर देश वे हैं जो विज्ञान में अमीर हैं और परीब वे हैं जो विज्ञान में पिछड़े हुए हैं। मानवता का इन दो वर्गों में बँट जाना अपेक्षाकृत कुछ नयी बात है और इसका कारण यह है कि कुछ देशों ने विज्ञान के प्रयासों का भरपूर काम उठाया है और दूसरे कुछ देश इसका इतना साम नहीं उठा सके। वैज्ञानिक क्रांति का यह एक बहुरिस्मय पहलू है कि अमीर देशों की अवस्थिति यहाँ सतत प्रगतिशील है, परीब देशों की अवस्थिति यहाँ की वहाँ रुकी है। इसका मतलब यह भी है कि गरीब और

अमीर देशों के बीच का अन्तर न केवल ज्यादा है बल्कि समय के साथ बढ़ता भी जा रहा है। परीब देशों में बेटी से पैदा होने वाली बीमों के दाम सवा प्रायः एक से रहते हैं जबकि गनी देशों में पैदा की जाने वाली जीवोपिक बीमों के दाम निरन्तर बढ़ते रहते हैं। इस तरह विकसित बीम देशों के लिए उत्पादक सामान और मशीनें बाहर से मँगाना मुश्किल हो जाता है। पाल ईश्टमैन ने बताया है कि विकासशील देशों को 1958 में सहायता के रूप में लगभग 24 अरब डॉलर दिये गये। इस वर्ष उन्हें आमतौर की मशीन वस्तुओं पर दो अरब डॉलर उस जन राशि से ज्यादा खर्च करना पड़ा जो उनको अपनी बेटी में पैदा होने वाले मात को दुधरे देशों को बेचने से मिली थी। इस तरह की जाने वाली सहायता तो बहुत कुछ यों ही खर्च हो जाती है। इस समस्या का कुछ हम तो निरूपण ही चाहिए। इसके लिए साहसी कदम उठाने पड़ेंगे और दूर दक्षिण से काम लेना होगा। विकसित और अतिकसिब देशों के बीच का अन्तर दोनों ही के लिए बुरा है। जितने लोग ब्रिटेन में रहते हैं भारत में रहने वाले उठने लोगों की आमदनी कुम इतनी है जितना कि इन्वीण्ड के सोम सिपरेट और तम्बाकू पर पूँक देते हैं। अब यह सिद्ध ही चुका है कि सिपरेट-तम्बाकू से पैसों का बीसर होने का दर बढ़ता है। अगर अमीर देश जितना पैसा इस तरह

सिगरेट सम्बाहू पर फूंक बैठे हैं। उतना वे नये विकासशील राष्ट्रों को इनका बाध उत्पादन बढ़ाने के लिए सहायता रूप में दे दें तो इससे बागों को साम पहुँचेगा। इस सम्बन्ध में यह बात बार रखने की है कि बनी बेघों की समृद्धि को बढ़ाने में अन्न देशों के मौखिक स्रोतों विस्फ और मस्तिष्क का शोध दान कम नहीं है। भारतीय हस्तकला कौशल की डूबी किस्म की बसाधारणता इसका एक सवाहरण है और जिसके बारे में रॉबस सोसायटी के एक सेक्रेटरी भी हैंने ने 1686 के एक पत्र में लिखा था 'मैंने एक भारी विधिप्रता देखी है। यह माछ से माई हुई कैतिको कमीज है। यह बिना सिताई के एक ही टुकड़ों को बुनकर बनाई गई है। यदि मैंने यह न देखी होती तो मैं इसे एक असम्भव बात मानता। इससे हमारे बंधों में सेवेयर कोट की ब्याख्या हो पाती है जो बिना सिल तैयार किय जाते थे।

### बिहास को प्रगति के बीज

पहले जमाने में जब एक देश दूसरे देश की मदद करता था तो उसे राजनैतिक शक्ति या युद्ध के कारण यह मदद करनी पड़ती थी। इसमें जो कुछ प्राप्त होने वाले देश को मिलता था वह बाधा देश का मुक्तान होता था। यदि वह केवल जमीन या मौखिक साधनों की बरसा-बदली ही होती थी तो सदा ही एक देश की कीमत पर दूसरा



बंधनमयता था। लेकिन आजकल के जमाने में जब सृष्टि और प्रकृति मुख्य रूप से विज्ञान और टेक्नोलॉजी को अधिकाधिक उपयोग में लाने पर निर्भर करती है यह स्थिति पूरी तरह से बदल गयी है। किसी कम विकसित देश को वैज्ञानिक ज्ञान की टेक्नोलॉजी बिना बठा कर और इस तरह उसकी मदद करके बाता देना कुछ भी नहीं होता। हालांकि यह वैश्वीय लोगों का जहरत से ज्वाला सरलीकरण है फिर भी हमें इस महत्वपूर्ण बात को समझ लेना चाहिए कि विज्ञान का अव्यक्त तरीके से बढ़ना एक ऐसी बात हो गई है जिससे यदि कोई आधुनिक देश चाहे तो पिछड़े देशों को आधुनिक बनाने में बड़ी मदद कर सकता है। क्योंकि वैज्ञानिक ज्ञान जितने भी कम समय में जुड़ना हो जाता है जितना जनसंख्या को जुड़नी होने में समय लगता है। आधुनिक देश अगर चाहें तो आवश्यक संख्या में प्रशिक्षित कारीगर, मात्र सामान देकर मदद पहुँचाने वाले देश के विकास की गतिता प्रक्रिया को आरम्भ करने में बुनियादी बीज का काम कर सकता है और ऐसा करने से हमकी आर्थिक दृष्टि भी कोई बिजेष प्रभावित नहीं होती। यह मानना कि स्थानीय प्रयत्न और पहल का बाहरी सहायता कोई स्थान नहीं ले सकती। अद्यतन में तो बाहरी सहायता का बड़ी पैमाने पर है जो अपने स्थानीय प्रयत्नों को इतना बढ़ा बना लेता है कि

बिना सहायता के भी वह काम चला सके। हाँ वैज्ञानिक सहायता लिए बिना विकास की प्रगति मन्द अवश्य हो सकती है। यहाँ यह कहना अनुचित न होगा कि भौतिक साधनों और क्षेत्रों की कमी नहीं है। सम्भवतः तेजी से विकास करने के लिए मुख्य बाधाएँ सामाजिक और मनो-वैज्ञानिक हैं।

उन देशों में जहाँ पर विज्ञान को व्यावहारिक उपयोग का काम अभी शुरू हुआ है यदि पूँज निरक्षर कर लिया जाये तो इनके विकास की गति उन देशों की अपेक्षा नहीं अधिक हो सकती है जहाँ पर विज्ञान को व्यवहार में लाने का काम काफी पहले शुरू हो चुका है। ऐसा कई देशों में हुआ भी है। ऐसा समझा है कि विज्ञान को व्यावहारिक उपयोग में लाने वाले ये दोनों देश कुछ समय बाद समान स्तर पर आ जाते हैं और फिर दोनों देशों की एक-सी प्रगति होने लगती है। इससे अधिक प्रगति सम्भवतः इन देशों को प्राप्त नहीं हो पाती।

## विज्ञान और वृषि

जिन देशों में वृषि को वैज्ञानिक रूप से किया गया है। वहाँ पर उपज बहुत तेजी से बढ़ी है। लेकिन जहाँ पर खेती में विज्ञान का उपयोग नहीं किया गया है वहाँ का उत्पादन समयाग नहीं के बराबर बढ़ा है, जसा कि सादे रबरकोटे

ने 1958 में होने वाली भारतीय विज्ञान कांसेस के खत बयली के अखतर पर मापक बैठे हुए कहा था "कि भारत में यैहूँ का वार्षिक उत्पादन 1914 में 85 लाख टन था जो इस वर्ष बढ़कर 95 लाख टन हो गया जब कि इसी काल में आयात का आयात 10 लाख टन से घटकर केवल 10 हजार टन रह गया । आयात यैहूँ की वयस अकमल 110 लाख टन है ।"

रकरफोर्ड ने कहा था 'उपरोल्ल तथ्यों के आसार पर कहा जा सकता है कि अनुसंधान की किसी भी राष्ट्रीय योजना में छात्राओं के अनुसंधान को प्राथमिकता दी जानी चाहिए । भारतीय दृष्टि पद्धति में सुधार के अतिरिक्त फलनों के सुधार की दिशा में वैज्ञानिक ज्ञान का उपयोग करने के लिए बड़ा सब बहूता पदा है । उदाहरण के लिए स्थानीय पद्याओं के अनुसंधान उन्नत बीजों की लोच करना उर्बरकी पर धोच तथा अन्य ऐसी पद्याओं में लोच करना' समय 20 वर्ष पूर्व बही यकी है बाते आज भी उतनी ही साधु होवी हैं ।

### वैज्ञानिक अनुसंधान और विकास-अनुसंधान व्यय

जो धन अनुसंधान और विकास पर खर्च किया जाता है वह अपने में पूर्ण तरह से का उर्बादीय दृष्टि से किसी देश के वैज्ञानिक विकास का संतोषजनक संकेत-संकेत नहीं

माना जा सकता। इस बात पर यह चिन्तन अधिक गिर्नर करेगा कि इस के धावन और मोठ कितनी अधिक बन्धी तरह से उपयोग किये गये हैं। लेकिन फिर भी कुछ सीमा तक यह संश्लेष-चिन्तन महत्वपूर्ण है। जासकस संयुक्त राज्य अमरीका की सरकार अपने कुल राष्ट्रीय उत्पादन का 2.8 प्रतिशत अनुसंधान विकास और सुरक्षा के मये उपकरणों की परख पर खर्च करती है। (इसके अतिरिक्त वहाँ के उद्योग भी लगभग 5 अरब प्रतिवर्ष खर्च करते हैं) बर्नार्ड इसके मतमक यह हुए कि 7500 करोड़ रुपये प्रति वर्ष अमरीका में अनुसंधान और विकास पर खर्च किये जाते हैं। इसमें से तीस बीसवाँ भाग सुरक्षा सेक्टर में खर्च होता है। हमारे देश में अनुसंधान और विकास पर कुल उत्पादन का केवल 0.2 प्रतिशत ही खर्च होता है। इस खर्च में यह कहा जा सकता है कि जो देश वैज्ञानिक ज्ञान के उपयोग करने के प्रथम चरण से निकल चुके हैं उनकी प्रगति हमारे देश के दगाओं में बहुत तेजी से हुई है। उनकी कुल-जनसंख्या 10 बर से भी कम है। बीस बर पहले संयुक्त राज्य अमरीका में कुल उत्पादन का केवल 0.5 प्रतिशत अनुसंधान और विकास पर खर्च किया जाता था जबकि 1920 में यह केवल 0.1 प्रतिशत था। 1940 में वहाँ की सरकार ने 7.4 करोड़ डॉलर और 1953 में 2 अरब डॉलर विकास और अनुसंधान पर खर्च किये थे।

इसीच की सरकार में 1959 में 33 लाख पीड वैज्ञानिक अनुसंधान पर खर्च किया था। आजकल इस पर छठे बार करोड़ पीड खर्च हो रहा है।

सरकार और उद्योग द्वारा अनुसंधान और विकास पर होने वाला खर्च 1956 में 30 पीड करोड़ और 1962 में 63 करोड़ पीड था जो कुल राष्ट्रीय उत्पादन का 1.7 से बढ़ कर 2.7 प्रतिशत हो गया था। आजकल अनुसंधान और विकास का बजट कुछ श्याम्बियों पूर्व के सारे सरकारी बजट से बहुत बढ़ गया है। 1909 में कुल बजट 13 करोड़ पीड था।

तभी अधिक अनुसंधान हो सकता है जब राष्ट्रीय आसमो अनुसंधान करने वाले हों। अमेरिका में वैज्ञानिक और इंजीनियरों का अनुपात कुल जनसंख्या का बंध प्रतिशत है। 1940 में यह केवल 0.6 प्रतिशत था। 1970 में यह बढ़कर 2 प्रतिशत हो जाया। पता चला है कि राष्ट्रीय आय का अनुसंधान और विकास पर होने वाला खर्च है और कुल जनसंख्या में मौजूद वैज्ञानिक और इंजीनियरों के प्रतिशत के बीच कुछ निश्चित अनुपात होता है। इसलिए यदि इनमें से पहला ऊँचा और दूसरा नीचा है तो निश्चित रूप से ही कहीं कुछ गड़बड़ी होगी। ज्यादा विज्ञान पाने के लिए हमें ज्यादा वैज्ञानिकों को बनकर है क्योंकि विज्ञान और अनुभव

शक्ति पर हुआ सर्वा साप-नाप बसता है। यह बात हम  
वैज्ञानिक चर्चा के तीसरे मुख्य पहलू पर ले जाती है।

विज्ञान और मानवता

वैज्ञानिक चर्चा के शुरू के दिनों में विस्मयिष्णुत्वों  
से विज्ञान को समझ कोई स्थान प्राप्त नहीं था यद्यपि  
यह माना कि उस जमाने में भी विज्ञान के क्षेत्र में कुछ  
व्यक्तियों में ऊँचे काम किये थे। लक्ष्मण कामठीर पर  
विज्ञान का मजाक उड़ाया जाता था और विज्ञान का  
पक्ष लेने वालों को चिढ़ाया जाता था। उदाहरण के  
लिए स्टीसन 'टैटसर' नाम की पत्रिका में—'मस्तिष्कहीन  
बासक' नाम का वह लेख जो रॉयस सोसाइटी के 'द्वाराचल्य  
बासक' जो रॉयस सोसाइटी में छपा था—के बारे में कहा था कि  
यह बड़े बड़े की बात है कि वह मस्तिष्कहीन बासक अर्थात्  
दिन तक चिन्ता नहीं रह सकता नहीं तो वह रॉयस सोसा  
इटी का योग्य प्रधान बन सकता था। उस जमाने में  
बासू टोसा में यकीन रक्ता प्रपत्तिधीन विचारों की  
निर्गामी का और औपचि-विज्ञान में औपचि-व्यक्ति  
अयोग्य नबम बड़ी मानी जाती थी। उस जमाने में प्रकृति  
का सही और परीक्षण योग्य ज्ञान जो मनुष्य के मस्तिष्क  
को हृदयों कुमंस्कारों में और सत्ता से मुक्त करता था  
ही पाया जाता था। उस जमाने के विस्मयिष्णुत्वों में

इंजीनर की सरकार ने 1939 में 35 लाख पौंड वैज्ञानिक अनुसंधान पर खर्च किया था। आजकल इस पर साढ़े चार करोड़ पौंड खर्च हो रहा है।

सरकार और उद्योग द्वारा अनुसंधान और विकास पर होने वाला खर्च 1956 में 30 करोड़ और 1962 में 63 करोड़ पौंड था जो कुल राष्ट्रीय उत्पादन का 1.7 से बढ़ कर 2.7 प्रतिशत हो गया था। आजकल अनुसंधान और विकास का बजट कुछ दशकियों पूर्व के तारे सरकारी बजट से बहुत बड़ा रहा है। 1909 में कुल बजट 15 करोड़ पौंड था।

सभी जिनके अनुसंधान हो सकता है जब काफी आसानी अनुसंधान करने वाले हो। अमरीका में वैज्ञानिक और इंजीनियरों का अनुपात कुल जनसंख्या का बड़ा प्रतिशत है। 1940 में यह करण 0.6 प्रतिशत था। 1970 में यह बढ़कर 2 प्रतिशत हो जाएगा। बता जाता है कि राष्ट्रीय आय का अनुसंधान और विकास पर हान वाला खर्च है और कुल जनसंख्या में मौजूद वैज्ञानिक और इंजीनियरों के प्रतिशत के बीच कुछ निश्चित अनुपात होता है। इसलिए यदि हमें से बहुत ऊँचा और सुतरा नीचा है तो निश्चित रूप से हो नहीं कुछ पड़नी होगी। ज्यादा विज्ञान जाने के लिए हमें ज्यादा वैज्ञानिकों की जरूरत है क्योंकि विज्ञान और अनुभव

साक पर हुआ लर्चा साब-साब बलता है। यह बात हमें  
बैज्ञानिक ध्यन्ति के तीसरे मुख्य पहलू पर से आती है।

### बिज्ञान और मानवता

बैज्ञानिक जाति के शुरू के दिनों में बिस्वविद्यालयों  
में बिज्ञान को सगमय कोई स्थान प्राप्त नहीं था यद्यपि  
यह माना कि उस जमाने में भी बिज्ञान के क्षेत्र में कुछ  
ध्यत्तियों में ऊँचे काम किये थे। लेकिन सामग्री पर  
बिज्ञान का बकाक उड़ाया जाता था। उदाहरण के  
पक्ष सेने बामो को बिड़ाया जाता था। उदाहरण के  
लिए 'स्टीम' ने 'टैटसर' नाम की पवित्रा में—'मस्तिष्कहीन  
बालक' नाम का बहु लेख को रॉयस सोसाइटी के 'ट्रायीलम्प  
आफ दो रॉयस सोसाइटी' में छपा था—के बारे में कहा था कि  
यह बड़े नेह की बात है कि वह मस्तिष्कहीन बालक अधिक  
दिन तक जिया नहीं रह सका नहीं तो वह रॉयस सोसा  
इटी का योष्य प्रकाश बन सकता था। उस जमाने में  
बाहु टोना में यकीन रचना प्रगतिशील बिचारों की  
निरामी का और औपधि-बिज्ञान में औपधि-ध्यत्त  
ध्योतिप सबसे बड़ी मानी जाती थी। उस जमाने में प्रकृति  
का सही और परीक्षण योष्य ज्ञान को मनुष्य के मस्तिष्क  
को बहियों कुर्मकारों में और सता से मुक्त करता था  
नहीं पाया जाता था। उस जमाने के बिस्वविद्यालयों में



धार्मिक चिन्ता ध्याकरण कविता और फसित ज्योतिष  
 प्रमुख विषय रहते थे। लेकिन जैसे जैसे वैज्ञानिक क्रांति  
 की पति बढ़ती गयी त्यों त्यों विज्ञान को विश्वविद्यालयों  
 में अधिकारिक स्थान प्राप्त होने लगा। लेकिन विश्व  
 विद्यालयों में उसके प्रबल का विरोध हुआ और बड़ी अनिच्छा  
 से उसको स्थान दिया गया। आज तो हासत विस्मय  
 बचन गई है और अब हुआ का रत्न पूरी तरह पसंद गया  
 है अर्थात् विश्वविद्यालयों में विज्ञान को अत्यधिक महत्व  
 दिया जाना गया है। लेकिन जो एक जमाने में विज्ञान के  
 साथ बटा या बड़ी बात अब टेक्नोलोजी के साथ हो रही  
 है। विज्ञान कांग्रेस जैसी संस्थामें विज्ञान और टेक्नोलोजी  
 के मानवीय पक्ष को मायता दिखाने में काफी महत्वपूर्ण भाग  
 लेना कर सकती है। क्योंकि यदि विज्ञान और टेक्नोलोजी  
 सही और उचित ढंग से पढ़ाए जाय तो उनमें भी उतना  
 ही मानवतावादी प्रभाव पड़ सकता है जितना अन्य विषयों  
 से होता है। इसलिए विज्ञान कांग्रेस को विज्ञान की बुनि  
 यादी आवश्यकताओं और जरूरतों के बारे में जनता में  
 जन-जागरण फैलाने की और गभीरता पूर्वक ध्यान देना  
 चाहिए क्योंकि अनुरोधोंवा यदि जनता विज्ञान में रुचि  
 नहीं है तभी विज्ञान की महत्ता मिथता है।

आधुनिक जगत में सैद्धान्तिक विज्ञान के क्षेत्र में  
 विश्वविद्यालय सबसे बड़ा साक्षरान कर सरने है। इन

बात ने विद्वविद्यालयों को राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में एक नया महत्व और एक नया स्थान प्राप्त करा दिया है और वे इसमें महत्वपूर्ण भाग बढ़ा कर सकते हैं। सचार्ड तो यह है कि विद्वविद्यालयों में विज्ञान और टेक्नोलोजी देश की वैज्ञानिक और टैक्नीकल प्रगति का एक उचित वेमाना बन सकता है। एक विक्रममान देश में विद्वविद्यालयों को पच्छिमासी बनाना सभी दूसरी बातों से अधिक बुनियादी बात है।

एक घताब्दी से भी अधिक के अनुभव को महान जर्मन विद्वविद्यालयों से धुक् टुका जा से पता चलता है कि अध्यापन और अनुसंधान साथ-साथ ही सबसे अधिक अच्छी तरह चलने हैं। विनगता में दोनों ही कुम्हला जात है। दोनों को सबसे अच्छे मुन ऐस ही बातावरण से प्राप्त होते हैं जहाँ पर अध्यापन और अनुसंधान दोनों साथ-साथ चलाने जात हैं। अध्यापन और अनुसंधान सिता और जोखीन को इन युगम बोड़ी में ही विद्वविद्यालयों की जगती पच्छि निहित है।

इगरीण्ड में विद्वविद्यालयों का 50 प्रतिशत व्यय और वहाँ के अध्यापक वय का आधा समय अनुसंधान पर लर्न होता है। अमरीका की सरकार ने 1962 में लगभग 500 करोड़ रुपये विद्वविद्यालयों में अनुसंधान और विकास पर लर्न किये। यह वय 1940 में इसी तरह में

हुए बन की अपेक्षा 70 गुना अधिक है। अमेरिका के राष्ट्रपति की वैज्ञानिक परामर्शदाता समिति द्वारा प्रकाशित "विज्ञान और टेक्नोलॉजी" के लिए मनुष्य शक्ति की आवश्यकताओं के बारे में अभी हाल की रिपोर्ट में दो बार-बार जगहों में कहा गया है कि "राष्ट्र की अनिवार्य आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए हमें 1970 तक प्रथम श्रेणी के एबीनियर्स पण्डितों भौतिक वैज्ञानियों और इंजीनियरों की संख्या दुगुनी करना होगी जिसके लिए प्रतिवर्ष 4 हजार करोड़ रुपये खर्च करना होगा। (एनमें से 1500 करोड़ रुपया अनुसंधान पर खर्च होगा) आज केवल 1500 करोड़ रुपये ही उपलब्ध सब से खर्च हो रहा है। अमेरिका से 1961 में विज्ञान और टेक्नोलॉजी की स्नातक कक्षाओं में 45 साल बिद्यार्थी लिये मय से और उधु वर्ष इसको पढ़ाने के लिए समझय दन हजार अध्यापक य।

100 वर्ष पहले एक जमाना था जब एक प्रतिभावान व्यक्ति विज्ञान के सम्पूर्ण समार का ज्ञान प्राप्त कर सता था पर अब एसा नहो है। विज्ञान और टेक्नोलॉजी आज 100-150 विषयों में विभाजित हो मय है। यद्यपि यह विभाजन आमनीर पर इषिम होता है फिर भी विज्ञो तक व्यक्ति के लिए इनमें से एक विषय पर पूर्ण रूप से बिरुता प्राप्त करना मुश्किल हा जाता है। इस तरह विज्ञान के गरीकरण का यदि हम प्रतिपायी नही बनाता है तो उपरोक्त विषया की

सूचनाओं एक दूसरे को पहुँचानो होंगी। तभी यह पुस्तक के रूप में काम ले सकता है। विभिन्न विषयों की सीमाओं को बराबर बरसते रहने की जरूरत है। क्वालि विज्ञान का संबंधीकरण बनाना ही है। असम में ता विज्ञान एकता का सूत्रक है।

### पाठ्यक्रम में प्राप्ति

उदाहरण के लिए भौतिकी को ही में। विद्यार्थी और अध्यापक किस प्रकार दिन प्रति-दिन आत्यधिक गति से बढ़ते हुए विषय के साथ कदम से कदम मिला कर काम करना है? इस क्षेत्र में मात्र बहुत कृप्य ज्ञान को ही और जैसे जैसे काम निकलना आने हैं और तथा सीखने को बढ़ता जाता है। इसलिए यह चाहिए कि यदि हम को इस बढ़ते हुए ज्ञान के साथ कदम से कदम मिला कर कामना है तो हमें पाठ्यक्रम के अध्यापन और अध्यापन के तथ्यों में प्राप्ति सामी होगी। कोई भी एसी चीज जो अधिकांश महत्वपूर्ण न हो या जिसका उपयोग सीमित हो जिससे विचार उत्पन्न न बनना हो या जो बुद्धि का विकसित न करती हो ऐसी पाठ्य सामग्री को हार्ड स्पून या डिब्बी गंधाओं में बंद स्थान मही होना चाहिए। साथ ही भौतिकी को मजबूत के लिए हमें मजिद को बुनियादी विषय रूप में और अधिकांश सीखने पर जोर देना चाहिए।

पाठ्यक्रम में इस अत्यधिक आवश्यक क्रांति को मानने के लिए बिना एकमात्र के काम नहीं चलगा। इसके लिये विदेशविद्यालयों और हाई स्कूलों के अध्यापकों के सम्मिलित प्रयत्नों की जरूरत पड़ेगी। इसके लिए स्कूल और विदेश विद्यालयों में परस्पर आदान-प्रदान के रास्ते निकालने होंगे। अमरीका के कुछ बड़ी के भौतिक वैज्ञानिकों और विदेश विद्यालयों के हाई स्कूलों के अध्यापकों के सम्मिलित प्रयत्न द्वारा मीथिनी की पाठ्यपुस्तक तैयार करना इस प्रकार के सहयोग का एक स्वतंत्र उदाहरण है। यह पुस्तक अमरीका के छोटी स्कूलों में सफ़लतापूर्वक पढ़ाई या चुकी है। इस पुस्तक की पाठ्य सामग्री छ भी अधिक महत्वपूर्ण इसकी नवीनता और इसकी छाहसिक पद्धति है। हमारे देश में भी छोटी स्कूलों के लिए वैज्ञानिक विषयों में इसी प्रकार की पाठ्य पुस्तकों की तैयार करने का काम हो रहा है। यदि ऊँचे कितम की पाठ्य पुस्तकों और सबसे सम्बन्धित प्रकाशनों के प्रकारान्तर कार्यक्रम को सफलता मिलती है तो यह पक्की है कि इस प्रकार की पुस्तकों के लिए जाने की भी विद्वत् समितियों द्वारा उतनी ही माध्यता प्रदान की जानी चाहिए जितनी ऊँचे विस्म के अनुभवान्तर कार्यक्रम का मिलती है। इस बात पर वैमर्ष की रिपोर्ट 'विज्ञान तरकार और गृहणा' में भी जोर दिया गया है।

विज्ञानासा और वैज्ञानिक परम्परा का वातावरण

वैज्ञानिक और टेक्नीकम साहित्य आमतौर पर बहुत महँगा होता है। हमारे विद्यार्थी पुस्तकें आसानी से खरीद सकें इसके लिये यह आवश्यक है कि उनके सस्ते संस्करण और बिना पैसे की बिस्वै निकासी बायें। विज्ञान की प्रगति के लिए विज्ञानासाका मुक्त वातावरण आलोचना और विचारों का निरंतरता के साथ बाहिर करना जरूरी है। ये सारी बातें आसानी से संघटित की जा सकती हैं और इनको बढ़ाया जा सकता है, अगर दक्षिणायी विश्वविद्यालय और उनके साथ स्नातकोत्तर अध्ययन और अनुसंधान की उच्च संस्वामें भी सम्बद्ध हों। यह जरूरी है कि देश के ऊँचे वैज्ञानिक विश्वविद्यालयों में रहें ताकि ये जीवितानों को प्रेरणा द सकें। इसके साथ ही इस बात की भी पूरी कोशिश होनी चाहिए कि प्रसाधन में कम और वैज्ञानिक काम में अधिक सौग सगें साथ ही उन छोटी और मामूली प्रयोगशालाओं का जो ऊँचे नाम कर रही हैं अनुपात बढ़े तथा उन बड़ी प्रयोगशालाओं का अनुपात जो छोटे नाम कर रही हैं, बढ़े।

एक विश्वाममान देश में वैज्ञानिक परम्परायें कायम करने के लिए निश्चित रूप से प्रयत्न की आवश्यकता होती है और इसमें कुछ समय भी लगता है। माइकेल पोसियामी के

अनुसार उन सोचों में जिन्होंने संसार के अनेक ऐसे भागों की रक्षा है वहाँ विज्ञान की सभी सुख्खाठ हो रही है वे जानते हैं कि वहाँ पर विज्ञान के निर्मातारों का कितना काम करना पड़ रहा है। ऐसे स्थानों में अनुमान का काम प्रेरणा के अभाव में पड़ा रहता है जबकि दूसरे स्थानों में यह बिना किसी निश्चित निरेधारत्मक प्रभाव के बिगुरा पड़ा रहता है—जैसे तथा कविगु प्रसिद्ध 'मसखम' फसूर अपने आप इधर उधर फँस जाती है—जबकि कहने योग्य अनुसधान कुछ भी नहीं होता और कही कही अनुसधान हीठा ही नहीं केवल उसकी ऐसी ही बयायी जाती है।

आमतौर पर यह सब है कि किसी व्यक्ति की मूत्रनात्मक शक्ति अन्य जगहों की अपेक्षा विरचविद्यालय के बातावरण में अधिक देर तक काम कर सकती है क्योंकि वहाँ उसे निरन्तर सुखको की चुनौती का सामना करना पड़ता है। 'मार्स' नामक पत्र के इतिहास के ही एक सम्पादकीय में कहा गया है कि किसी वैज्ञानिक की जो पहल ही काफ़ी प्रसिद्ध हो चुका हो सभी लोगों का रास्ता प्रायः बहुत ज्यादा जैसे बहुत ज्यादा मात्रो-मात्रा और पर के निरु बहुत ज्यादा सामना और अपनी सुरक्षा के लिए बेतहाशा छिड़ इन सब चीजों के कारण एक जाता है। इन सब चीजों का पनरा विरचविद्यालय में अपेक्षा कुछ कम होना है। कहने है कि विज्ञान की प्रवृत्ति को पर

करने का सबसे आसान नुस्खा यह है कि बहुत सी वैज्ञानिक समितियों बना दी जायें उनको भारी सम्मान दिया जाय और उनमें देश के ऊँचे वैज्ञानिक मनोनीत किए जायें ।

## विज्ञान में सहयोगी भावना

धीरे धीरे विज्ञान सम्बन्धी काम अब ऐसा रूप में रहा है जिसमें मिल-जुल कर प्रयत्न करने की और अधिक आवश्यकता होती है । वास्तव में विज्ञान में तीव्र प्रगति के लिए यह आवश्यक भी है कि समन्वित सहयोग मिले । जाये दिन विज्ञान की समस्यायें अधिक से अधिक देखीया हो रही हैं और उनमें ब्यादा उपकरणों की जरूरत होती जाती है । विज्ञान में मिले-जुले काम की महत्ता द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान अनुभव की गई थी और इसके फलस्वरूप प्रगति भी अच्छी हुई । सबसे अधिक सफल प्रयोगशालायें बड़े-बड़े परिवारों की तरह काम करती हैं जहाँ उन प्रयोगशालायों के सदस्य अपने काम से मिलने वाली पुष्टी आधा और निरुद्धा सबको साथ-साथ अनुभव करते हैं ।

इन प्रकार से मिल-जुल काम की भावना को बढ़ावा देने की दिशा में विश्वविद्यालयों का एक विशेष महत्त्व है । संयुक्त राज्य अमेरिका के विज्ञान की राष्ट्रीय अकादमी के अध्यक्ष फ्रैंडरिक सीट्ज़ ने हाल में ही अपने



अनुसार उम लोगों ने जिन्होंने संसार के अनेक ऐसे भागों को देखा है वहाँ विज्ञान की बनी सुरमाँठ हो रही है वे जानते हैं कि वहाँ पर विज्ञान के निर्माताओं को किटना काम करना पड़ रहा है। ऐसे स्थानों में अनुसंधान का काम प्रेरणा के अभाव में पड़ा रहता है जबकि दूसरे स्थानों में यह बिना किसी निश्चित निदेशात्मक प्रभाव के बिलग पड़ा रहता है—जैसे तथा कथित प्रसिद्ध 'मदरहम' कपूर अपने आप ऊपर उपर फैल जाती है—जबकि क्यूने बोस अनुसंधान कुछ भी नहीं हाता और कही कही अनुसंधान होता ही नहीं केवल उसकी धरती ही बचायी जाती है।

आमतौर पर यह सच है कि किसी व्यक्ति की सूचनात्मक शक्ति अन्य बयहो की अपेक्षा विश्वविद्यालय के बाताबान में अधिक देर तक काम कर सकती है क्योंकि वहाँ उसे निरन्तर बुझकी की चुनौती का सामना करना पड़ता है। 'साईंस' नामक पत्र के हाल के ही एक सम्पादकीय में कहा गया है कि किसी वैज्ञानिक की या पहले ही काफी प्रसिद्ध हो चुका हो नहीं पायों का उल्ला प्रायः बहुत ज्यादा वैसे बहुत ज्यादा माओमापान और पर के लिए बहुत ज्यादा सामना और अपनी गुरछा के लिए देतहाया किन्तु इन सब चीयों के कारण एक शला है। इन सब बातों का गहरा विश्वविद्यालय में अपेक्षा हत कम हाता है। वरत है कि विज्ञान की प्रगति को बंद



अनुसार उन लोगों ने जिन्होंने उसार के अनेक ऐसे मामों को देखा है जहाँ विज्ञान की सभी सुखबात हो रही है वे जानते हैं कि वहाँ पर विज्ञान के निर्माताओं को कितना काम करना पड़ रहा है। ऐसे स्थानों में अनुसंधान का काम प्रेरणा के अभाव में पड़ा रहता है जबकि हमारे स्थानों में यह बिना किसी निरिच्छित निदेशात्मक प्रभाव के विकसित पड़ा रहता है—जैसे तथा कबित प्रसिद्ध 'मछरम' पक्षी अपने आप इपर उबर पैल जाती है—जबकि कहने योग्य अनुसंधान कुछ भी नहीं होता और कहीं कहीं अनुसंधान होता ही नहीं केवल उसकी धुँकी ही बचायी जाती है।

सामग्री पर यह सब है कि किसी व्यक्ति की नृबनात्मक शक्ति अत्यंत अल्प है जो अपेक्षा विरहविद्यालय के बातावरण में अधिक देर तक काम कर सकती है क्योंकि वहाँ उसे निरंतर चुषकों की चुनौती का सामना करना पड़ता है। 'मार्स' नामक पत्र के हाल के ही एक सम्पादकीय में कहा गया है कि किसी वैज्ञानिक को या पहले ही काफी प्रसिद्ध हो चुका हो नहीं तारों का रास्ता प्राप्त बहुत ज्यादा वेत बहुत ज्यादा तारोमामान पर के लिए बहुत ज्यादा सामान और अपनी सुरक्षा के लिए बेतहाशा छिड़ इन सब चीजों के कारण एक जगह इन सब चीजों का गहरा विरहविद्यालय में अपेक्षा इन सब चीजों का कारण है कि विज्ञान की प्रगति को मँद

करने का सबसे आसान नुस्खा यह है कि बहुत सी वैज्ञानिक समितियाँ बना दी जायें उनको नारी सम्मान दिया जाय और उनमें बेच के ठीके वैज्ञानिक मनातीत किम्य जायें ।

### विज्ञान में सहयोगी भावना

धीरे-धीरे विज्ञान सम्बन्धी काम जब ऐसा रूप में रहा है जिसमें मिस जुल कर प्रयत्न करने की और अधिक आवश्यकता होती है । वास्तव में विज्ञान में तीव्र प्रगति के लिए यह आवश्यक भी है कि समन्वित सहयोग मिस । प्राये दिन विज्ञान की समस्यायें अधिक से अधिक वैश्वीय हो रही हैं और उनमें ज्यादा उपकरणों की जरूरत होती जाती है । विज्ञान में मिले-जुल काम की महत्ता त्रितीय विश्व युद्ध के दौरान अनुभव की गई थी और इसके फलस्वरूप प्रगति भी अच्छी हुई । सबसे अधिक मफल प्रयोगशालायें बड़े-बड़े परिवारों की तरह काम करती हैं जहाँ उन प्रयोगशालायों के सदस्य अपने काम में मिसने वाली पुरी आगा और निरोगा सबको साथ-साथ अनु करने हैं ।

इस प्रकार से मिले जुल काम की भावना को बढ़ा देने की दिशा में विरविद्यालयों का एक विषय महत् है । संयुक्त राज्य अमरिका के विज्ञान की राष्ट्रीय अकादमी के अध्यक्ष टीडरिग सीट्ज ने हाल में ही अपने

एक मापक से कहा है 'यही इस बात पर जोर देने की आवश्यकता है कि विज्ञान में मिस-जुस कर काम करने की भावना दिन-ब-दिन जोर पकड़ती गई और पिछले ४० वर्षों के हीगन विद्वत्बिद्यालयों के माध्यम से यह ज्ञान बहुत प्रभावशाली रूप से किया गया है ।

### प्रसाधनों के बटवारे में सम्युत्पन्न

यह साह्य है कि अगर हम विद्या में अध्ये नतीजे प्राप्त करने हैं तो विज्ञान इन्वीवियरिंग कृषि और दूसरे विषयों में अध्यापन के लिए प्रसाधनों का ठीक ठीक बटवारा ही ठाकिक प्रथम एक युक्तिसमेत सम्युत्पन्न और परस्पर सहयोग की भावना बनी रहे । भारतवर्ष में सम्पूर्ण विद्या के लिए प्रसाधनों का उपयुक्त बटवारा होना चाहिए । अगर किसी एक विषय पर ज्यादा जोर दिया जाये और दूसरे विषय की अपेक्षा कम पर ज्यादा धरती किया जाय तो विद्या की समीक गठबन्धन अपेक्षी और इसके सम्बन्ध प्रसाधनों की चिन्तनगर्ची नाशित होगी ।

अगर विद्वत्बिद्यालय के बाहर वाले समुत्पन्न केन्द्र बहुत तेज रूपता से विकसित होंगे तो हमारा परिचय यह होगा कि विद्वत्बिद्यालय के कुछ प्राध्यापक निवृत्त जायेंगे । इस प्रकार विद्वत्बिद्यालय सम्बन्धित कम से कम से भी बचिन गूँडे की सम्बन्ध में जनता एक

है। बाकिर म विश्वविद्यालयों के कमजोर पड़ जाने पर अनुसंधान संस्थानों भी निश्चित रूप से कमजोर पड़ जायेंगी। इस विषय में हाम में ही निकली मौखिकी संस्था ( नू क० ) की रिपोर्ट काफी विस्तृत है। इस पर टिप्पणी करते हुए संदन के पत्र 'इकोनोमिस्ट' न 31 अगस्त 1963 के अंक में लिखा है

'म दोनों संस्थाएँ इस बात से बहुत ज्यादा परेशान हैं कि अच्छे मौखिक शास्त्री अच्छे वेतन और अनुसंधान की सुविधाओं के लोभ में जो कि उन्हें देखी जगह नहीं मिल सकती सरकारी संस्थाओं में जाय जाते हैं। परमाणु पाठ संस्थान बितना वेतन वैज्ञानिकों को अन्य संस्थाओं द्वारा कम ही मिल पाता है। एक बार जब म विश्व विद्यालयों को छोड़ कर बाहर चल जाते हैं तो वहाँ सम्पादन और विज्ञान के क्षेत्र म उनका स्थान खाली हो जाता है। इस प्रकार विश्वविद्यालयों के सम्पादन का स्तर गतरे में पड़ गया है क्योंकि अच्छे वैज्ञानिक तो बाहर चल जाते हैं और पढ़ाने के लिए वही ठरू के वहाँ रह सकते हैं जब तक कि उन्हें अनुसंधान की अच्छी सुविधाएँ प्राप्त न हों और विश्वविद्यालयों में इस प्रकार की सुविधाएँ प्राप्त नहीं होती।

इस विषय के पीछे एक पथररस्त मलाई है। कई सरकारी संस्थान विश्वविद्यालयों जैसे विमुक्त रूप से

अनुसंधान करने वाली संस्थाएँ बन गई हैं। जैसे परमाणु शक्ति संस्थान का काम बहुत कुछ वैज्ञानिक विज्ञान से सम्बन्धित है। इसी प्रकार वायु-संचार मन्त्रालय का मासकने में स्थित अपुर्णवान केन्द्र भी है। जब इन संस्थानों को उस उद्देश्य के लिये काम करने की जरूरत नहीं रही जिनके लिए उनको मूल रूप से स्थापित किया गया था। इस प्रकार विश्वविद्यालयों के प्राध्यापक बर्ष की मुरदावत शैक्षिक संपत्ति को सरकारी संस्थान हूँदिया गहे हैं। लेकिन हमका क्या हम हो सकता है ? क्या उन संस्थानों के साथ-समान को वो ही छोड़ दिया जाय और पिसिठ वैज्ञानिकों का पूरा उपयोग न किया जाय ? प्रश्न उठता है कि क्या विश्वविद्यालयों और सरकारी संस्थानों के बीच भी अनुसंधान कर्मचारियों का परस्पर महत्त-बहल होता रहे ? इस बारे में कई समितियों ने विचार किया लेकिन अभी तक किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँचा गया क्योंकि दोनों स्थालों के बैठन के बहुत बड़े अन्तर की समस्या तो बनी ही रह जाती है।

जब मास्य आरमिया की कमी हा जाती है तो बेहतर यह मानना होता है कि कुछ आरमियों का दोनों ही कामों वाली अध्यापन और अनुसंधान में सहायता जाय। यदि विनिर्वात और प्रवत्त किसी निश्चित सीमा में आगे बढ़ पाते हैं तो एक प्रकार की शून्यता-सहिषा

दीवा हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप और अधिक  
योग्य व्यक्ति बराबर मिलते रहे।

### शिक्षा पर खर्चा

यह एक रोचक तथ्य है कि विश्वविद्यालय में प्रत्येक  
विद्यार्थी की शिक्षा पर होने वाला खर्चा जिसमें उसके खाने  
और रहने का खर्चा शामिल नहीं है, लगभग उतना ही  
है जितना उस देश में प्रति व्यक्ति की औसत आय है।  
इस तरह विश्वविद्यालय में पढ़ने वाले प्रत्येक छात्र का  
खर्चा भारत में करीब 400 रुपये इंग्लैण्ड में करीब 600  
पौंड और अमरीका में करीब 3000 डालर प्रतिवर्ष है।  
अमरीका में स्नातक स्तर की शिक्षा का विययवार खर्चा  
इस प्रकार है मानवशास्त्र (बिज्ञानेतर) 3200 डालर  
शिक्षा 3300 डालर सामाजिक बिज्ञान 3250 डालर  
जीव बिज्ञान 33-4 डालर भौतिक बिज्ञान और पणित  
शास्त्र 3380 डालर और इंजीनियरिंग 4020 डालर।  
(राष्ट्रपति की बिज्ञान सप्ताहकार समिति की रिपोर्ट से  
उपर्युक्त आंकड़े उद्धृत किय गये हैं।) विश्वविद्यालय के  
प्राध्यापक का बेसन इंग्लैण्ड में आम आदमी की औसत  
आय का दुपुना है जबकि भारत में यही प्रति व्यक्ति औसत  
आय का पन्द्रह गुना है।



## उच्च शिक्षा और अनुसंधान केन्द्र

अनुसंधान और स्नातकोत्तर (पोस्ट ग्रेजुएट) काम के स्तर पर विकासशील देशों में होने वाला अर्धा कमी करीब उतना ही होता है जितना कि अधिक उन्नत देशों में। विकासशील देशों के पास सीमित साधन हैं इसलिए उन्हें अपने उद्देश्य की पूर्ति करने के लिए अपने साधनों को एक साथ जुटाकर काम करना होता है। यदि विश्वविद्यालय परस्पर सहयोग करें तो यह सम्भव है कि कुछ उच्च स्तर के केन्द्र प्राप्त हो सकें। दूसरे शब्दों में हमारा उद्देश्य यह होना चाहिए कि हम सावधानी पूर्वक सोच विचार कर कुछ विषय छांट लें और कुछ विश्वविद्यालय छांट लें और उन्हीं के अनुसंधान उच्च शिक्षा के केन्द्र लोते। इस केन्द्रों से यह सम्भव होगा कि हमारे लोते जाने वाले केन्द्रों के लिए वहाँ से 'नामची मिल सकेगी। विकासशील देशों के लिए यह जरूरी है कि वे शुरू-शुरू में इसके लिए जोरदार प्रयत्न करें। इसके अलावा यह भी जरूरी है कि विश्वविद्यालयों और राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं तथा अनुसंधान केन्द्रों के बीच कुछ सहयोग हो। ताकि इन सब के सहयोग से और सभी प्राप्त प्रयोगशालाओं से उच्च शिक्षा और अनुसंधान के केन्द्र स्थापित किये जा सकें। और ऐसा कि उन्हें अनुसंधान न अपनी नयी पुस्तक 'छात्र

एण्ड पॉसिटिक्स' (विज्ञान और राजनीति) में कहा है कि सरकार और विद्वानविद्यालयों के बीच एक स्वल्प सम्बन्ध आमतौर पर सरकार और विज्ञान के परस्पर आदान प्रदान और समुत्पन्न के लिए बहुत महत्वपूर्ण है।

इन बातों से जो परिणाम निकलने हैं वे साफ और सीधे हैं। लेकिन अक्सर जो चीजें साफ और सीधी नजर आती हैं वे करने में बहुत ही मुश्किल होती हैं। य नतीज नीचे दिये जा रहे हैं।

1. विद्वानविद्यालयों के सुधारने के लिए हर सम्भव प्रयत्न किया जाना चाहिए जैसे विद्याभिया और अध्यापकों के बीच का अनुपात बढ़ाया जाय पुस्तकालय और प्रयोगशालाओं को आसानी पर स्नातकोत्तर और अनुसन्धान स्तर के विद्यालयों के लिए अधिक सुविधाएँ दी जाएँ प्रतिभावाद् व्यक्तियों और सुविधाओं के उपयोग के लिए उपयुक्त योजना तैयार की जाय। आवश्यक तो हमारे देश में य सुविधाएँ बहुत कम हैं। आपापी ७ वर्षों में विश्व विद्यालयों का आकार-प्रकार कम से कम दुगना तो कर ही देना चाहिए।

सबसे ज्यादा जरूरत तो स्नातकोत्तर छात्रों के लिए विद्यालय सोचने की है और इनका सम्यक्त अध्ये रूप से ध्याना जाना चाहिए। राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं और दूसरी

मंस्थानों के सभी प्राप्य प्रसाधनों का समन्वित प्रयोग किया जाना चाहिए।

2. विरचविद्यालयों में अच्छे काम करने सम्पादन और अच्छे अनुसंधान की भरपूर प्रवृत्ति की जानी चाहिए और उन्हें प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। विज्ञान में जितना कोई ईमानदारी से भी छोड़ मेहनत करता है उतना सीधा सम्बन्ध उसी के अनुपात में मिलने जाने लगीया से होता है।

3. विरचविद्यालयों राष्ट्रीय अनुसंधानसालाओ सरकारी वैज्ञानिक महकमों और उद्योगों के साथ परम्पर सम्पर्क बना रहना चाहिए। इस सम्पर्क के अन्तर्गत वेना निक कर्मचारियों की बदला-बदली भी शामिल है। या कोई व्यक्ति वास्तव में योग्य हो और विरचविद्यालय में काम करना चाहे उस प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। क्या कि आज हमें इस बात की इतनी जरूरत है कि नमी प्रसाधनों का भरपूर लाभ उठाया जाना चाहिए।

4. अच्छा वातावरण नेतृत्व और त्याग की भावना सामूहिक काम के लिये बहुत महत्वपूर्ण है और इनके ही ऊँचे दर्जे का वैज्ञानिक नाम होता है। योग्य और प्रतिभावाद् आदमिया को ऐसी सुविधाएँ दी जानी चाहिए ताकि वे अपना काम पूरी मयन के साथ छोड़े-माँटे सकें और योग्यताया में बिना पड़े कर सकें। इसलिए प्रसाधनिक भार और

बेकार की औपचारिकताएँ कम से कम की जानी चाहिए।

5 हमारे धायम सीमित हैं इसलिए जरूरत इस बात की है कि हम सीमित साधनों में अधिकतम साम उठा सकें। यानी हम बचाव पैसा खर्च करने के दिमाग खर्च करके वह काम निकाल सकें।

संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति की विज्ञान समिति कार समिति न अपनी हाल ही की रिपोर्ट में (जिसे अणु ऊर्जा आयोग के वर्तमान अध्ययन प्रोफेसर जी टी सीबोर्थ की अध्यक्षता में तैयार किया गया है) कहा है 'बुनियादी अनुसंधान और स्नातक शिक्षा को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। निश्चित रूप से राष्ट्रीय सरकार इस काम की धुरी है। क्या अमेरिका में बुनियादी अनुसंधान और स्नातक शिक्षा को मात्रा और किस्म काफ़ी या नाकाफ़ी होगी? —यह बात अमेरिकी सरकार पर ही मुख्यरूप से निर्भर करती है। इसको अमेरिकी सरकार टाल भी नहीं सकती। अमेरिकी सरकार को इसके अनुकूल नीति बनाना पड़ेगी और ऐसे माबन चुटान पड़ेंगे ताकि विश्व विद्यालय धन-सूत्रों और अपना धायित्व सफलतापूर्वक निभा सकें और अगर सरकार ही ऐसा नहीं करेगी तो और कौन करेगा?

ये बड़े बुजिमानों घरे सख्त हैं और हम पर भी बँस ही लागू होने हैं जैसे उन पर। यहाँ हम थी मेहरू क के

सम्बन्धित रहना चाहेंगे जो उन्हें कुछ बात पहले एक विश्वविद्यालय के शीघ्रता समारोह में कहे के क्योंकि विश्वविद्यालय की इससे ज्यादा उम्मा तस्वीर धारण ही नहीं जा सकती हो ।

“विश्वविद्यालय मानवता सहनशीलता युक्ति, सत्य की सोच विचारों की मनीषता का प्रतीक है । अगर विश्वविद्यालय अपने कर्तव्यों को ठीक तरह से निभावे तो सारे देश और जनता की मलाई होगी ।”

विज्ञान ने मनुष्य के भौतिक आतावरण के बदलने में एक खास पैसा कर दी है । इसके कारण आम आदमी को भी इतनी मुक्त सुविधाएँ प्राप्त हो गई हैं जितनी कि उसे पहले कभी प्राप्त नहीं हुए । लेकिन अभी यह बात संसार के सभी देशों के लिए लागू नहीं होती । आदि काल से ही ऋषि मुनि और महान व्यक्ति उपरोक्त संसार का सपना देखने आ रहे थे । लेकिन अब तक इस सपने को पुरा करने के आवश्यक साधन जो निश्चित रूप से ही विज्ञान और टेकनोलोजी पर आधारित है प्राप्त नहीं थे । प्राचीन सभ्यताओं और संस्कृतियों में तथा उनके बाद की सभ्यताओं में गुनाहों को रगकर काम करना उनका एक अभिप्राय बन पा । भरतू ने कहा था ‘गुनाह प्रथा अभी नष्ट हो सकती है वह परिश्रम करने के लिए मशीनों की ईजाद हो पाये । और यही वास्तव में हुआ भी लेकिन हमने करने में ही

हजार साल से भी अधिक समय पहले। जैसे आज मछीमों ने  
 मनुष्य को कई परिश्रम से मुक्ति दिला दी है उसी तरह  
 स्वतन्त्र-सामिन्त यंत्रों और कृत्रिम मस्तिष्क रूपी मछीमों के  
 विकसित हो जाने पर निकट भविष्य में मनुष्य के अर्थिक  
 बोझों से निरत होने वाले और सामाजिक कामों से छुटी  
 मिल जायेगी। जब तक आमतौर पर बातावरण में ही जीवन  
 के विकास की प्रभावित-क्रिया है। लेकिन जब मनुष्य अपने  
 मस्तिष्क की अद्भुत प्रतिभा और विज्ञान की खोजों द्वारा  
 प्राप्त शक्ति को अपने माय्य निर्माण के रखने में जान  
 बूझ कर व्यवहार करने लगेगा। ऐसा समय है भौतिक  
 शक्ति को पाना ही अब तक मनुष्य का उद्देश्य रहा है।  
 लेकिन अब ऐसा समय है कि जीवन को सार्वक बनाने  
 के लिए ऊँचे मूल्यों को खोजना मनुष्य अपना उद्देश्य बना  
 लेगा। इसी को विनोबा भावे विज्ञान और जाप्यात्म का  
 मूल कहते हैं। मनुष्य अपने इस उद्देश्य में सफल हो जायेगा  
 यदि वह परमाणु की विभीषिका से बच सके। अब यह  
 मयाभक समय छिपा नहीं रहा है कि मनुष्य आज संकट की  
 ऐसी बजार पर लड़ाई जो पहले कभी पैदा नहीं हुई थी। यह  
 संकट परमाणु शक्ति का जान बूझ कर या अनजान इस्ते  
 मान है। इतिहास में मनुष्य द्वारा जितने भी युद्ध सड़े गये  
 हैं उनमें मुक्त हुई विस्फोटक शक्ति किमी रसायनिक विस्फोट  
 जैसे टी-एन-टी की लक्ष्य 50 लाख टन (या 5 मैगाटन)

के तुल्यांक है। तृतीय मुख के बाप के क्षान्ति काम में परमाणु  
 बिस्फोट परीक्षणों से त्रिगुणी शक्ति मुक्त हुई है वह 5 हजार  
 सात टन (500 मीगाटन) टी-एन-टी के बराबर है।  
 यदि ससार में पुरे पैमाने पर परमाणु मुख छिड़ जाये तो  
 यह शक्ति साक्षात् मीगाटन हो जायगी और इस मुख के छिड़  
 जाने के कुछ घण्टे और दिन में जल्द ही करोड़ों अरबों  
 लोगों की जान जायगी। पाँच पाँच ही भीर पचास पचास  
 हजार मीगाटन ऐसी संख्याएँ हैं जिनको सुनने से ही हम डर  
 सपटा है। आज परमाणु या बहिष्ता या बुगारे छाया में  
 मनुष्य द्वारा अज्ञित अन्तरिक्ष ज्ञान और उसके मस्तिष्क में  
 ज्ञान के भरे बीच सन्तुलन नहीं रहा है। इस असन्तुलन का  
 दूर करना ही मनुष्य मात्र का कर्तव्य है। मनुष्य मात्र एक  
 एही क्षण पर तड़ा है कि चाहे तो नीच लहड़ में विरकर  
 अपने का महान शक्ति पहुँचा सकता है और चाहे तो  
 मानवता का उच्च सिंगर पर पहुँच सकता है।



विज्ञान और विश्वविद्यालयों में अत्यन्त विज्ञान के ज्ञान के बचपन  
 अधिपतन (मसूकर 1963 के अन्वय में अज्ञान का कथन है।

## प्राचीन शिक्षा और विज्ञान

भारत में प्राचीन काल से ही उच्च शिक्षा की एक सानदार परम्परा रही है। हमारे देश के तत्कालीन और मानदा विश्वविद्यालय अत्यंत विख्यात हैं। तत्कालीन विश्वविद्यालय 700 ईसा पूर्व से लेकर छठी सताब्दी तक बराबर उत्पत्ति करता रहा किन्तु इसके बाद हूणों के हमले के कारण यह अन्त हो गया।

### शिक्षा की प्राचीन परम्परा

नालंदा विश्वविद्यालय की स्थापना गुप्तकाल में हुई थी और उसके संस्थापक राजा श्री परतप विक्रम के राज मंत्री स्वामि परमजीव हैं। इस विश्वविद्यालय के द्वार पर लिखा हुआ था "अध्याय को समा से बढ़ाओ शोध को व्यवहार से भारो और अज्ञान को हरण से भीतो।" सातवीं सताब्दी में ज्ञानसिंह नाम का प्रसिद्ध चीनी यात्री भारत में आया था और उसने भी अपना काफी समय नालंदा विश्वविद्यालय में बिताया था। नालंदा विश्वविद्यालय में शक्तिशाली होना के लिए एक बड़ा भारी प्रयत्न द्वार बना हुआ



का जहाँ पर द्वार-बंधित बैठता था। यह द्वार पश्चिम ही  
 विश्वविद्यालय में प्रवेश पाने के इच्छुक नये छात्रों की  
 परीक्षा लिया करता था। इसके लिए यह द्वार-बंधित बैर  
 बैरान और शास्त्र से सम्बन्धित कुछ जटिल और कठिन  
 प्रश्न पूछता था। जो प्रवेशार्थी इन प्रश्नों का उत्तर  
 सफलतापूर्वक देते थे उनके लिए नाम्ना विश्वविद्यालय  
 का प्रवेश द्वार खुल जाता था। किन्तु जो इन सवालों का  
 जवाब नहीं दे पाते थे ऐसे असफल छात्रों को मिथछ  
 सीटना पड़ता था। जब यह विश्वविद्यालय अपनी प्रगति  
 की शरम सीमा पर था उस समय इस समय 10 हजार  
 विद्यार्थी पढ़त थे। इनके आवास की पूरी व्यवस्था विश्व  
 विद्यालय में थी। उस जमाने में यहाँ पर समय डेढ़ हजार  
 सिद्धक थे। इसके बाद में यह बात विधेय रूप में  
 प्रस्तुतनीय है कि उस जमाने में भी नाम्ना विश्वविद्यालय  
 में शिक्षकों और विद्यार्थियों का अनुपात 1 और 7 का  
 था। आजकल के आधुनिक देशों के अच्छे विश्वविद्यालयों  
 में भी यही अनुपात रखा जाता है। हमारे देश में आज  
 कम गिराक और विद्यार्थियों का अनुपात समय 1 और  
 17 है। नाम्ना विश्वविद्यालय में विद्यार्थी अपने गिराकों  
 का पूरा आदर और सम्मान करने थे और नाब ही वे  
 अपनी सेवा भी करते थे। नाम्ना विश्वविद्यालय समय  
 1700 ई० तक कायम रहा।

एक बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि जब नूनाग और रोम के विश्वविद्यालय अवनति को प्राप्त हुए तो नार्मंडा विश्वविद्यालय उच्च स्थिति पर था और जब नार्मंडा के बुरे दिन आये तो यूरोप में आधुनिक विश्वविद्यालयों का भीषणोच्च हुआ। सबसे पहला विश्वविद्यालय इटली में कायम हुआ। इसके बाद पेरिस और बार्नफोर्ड में आधुनिक विश्वविद्यालय कायम हुए। इटली के बोस्ना विश्वविद्यालय में प्रसिद्ध ज्योतिर्विद कार्पनिकस ने जिन्होंने प्रमाण दिया कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है।

नार्मंडा विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों द्वारा शिक्षकों का आदर और सम्मान की परम्पराओं के विपरीतदृष्टि की बोस्ना विश्वविद्यालय का कुछ दूसरा ही रूप था। इस विश्वविद्यालय का प्रबन्ध विद्यार्थी ही करते थे। वे ही अध्यापकों की भर्ती और नियुक्ति करते थे। जब अध्यापक कक्षाओं में अनुपस्थित होते थे तो वे उन पर जुर्माना भी करते थे। यदि किसी अध्यापक का एक दिन की छुट्टी लेनी होती थी या भी इसकी अनुमति उनकी विद्यार्थियों से ही लेनी पड़ती थी। (इसका विशेष विवरण 'विज्ञान और इतिहास सेक में दिया गया है।)

इस मामूली गुरुआत से विश्वविद्यालयों का आधुनिक रूप मनुष्य के इतिहास में इस बात का अन्त मन्त्र है

कि यदि सामना बनी रहे तो एक छोटी सी पाठ भी कालान्तर में एक विद्याम नदी का रूप धारण कर लेती है।

उच्च शिक्षा जरूरी

आज के युग में भी देश के विकास और उन्नति के लिए शिक्षा और खासतौर पर उच्च शिक्षा बहुत आवश्यक है। इस परमाणु युग में जो कहना चाहिए कि उच्च शिक्षा जितनी महत्वपूर्ण और उपयोगी शायद ही कोई दूसरी चीज हो। क्योंकि चाहे देश की आर्थिक उन्नति की बात हो चाहे सामाजिक विकास का सवाल हो चाहे हमारी राष्ट्रीय सुरक्षा का प्रश्न हो—इन सभी क्षेत्रों में विकास और प्रगति के लिये उच्च शिक्षा का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। जब हम शिक्षा के बारे में विचार करते हैं तो यह बहुत आवश्यक है कि हम उनके पुनरात्मक बंध (कमिटी) पर पूरा ध्यान दें। अब शिक्षा उच्चकोटि की नहीं है तो वह एक सीमा तक निस्तार ही है। उच्चकोटि की शिक्षा के लिए यह भी जरूरी है कि अध्ययन और अनुसंधान में समन्वय हो। के प्रतिस्पर्धी न होकर एक दूसरे के पूरक हो। ज्ञान और विशेषकर विज्ञान आज असाधारण गति से जाप बढ़ रहा है। इन जमाने में विज्ञान और टेक्नामीजी का बेव इतना तेज है

कि आज वैज्ञानिक ज्ञान लगभग हर 10-15 साल काच दुपना हा बाठा है। इसका मतलब यह है कि चाहे हम वैज्ञानिकों की सुख्या को ले चाहे वैज्ञानिक साहित्य आर पत्र-पत्रिकाओं की बात करें चाहे इंजीनियरिंग सामग्री के उत्पादन की बर्चा करें या हवाई जहाजों द्वारा प्राप्त की गई एस्तार की बात करें—इन सभी चीजों पर, जो विज्ञान और टेक्नासीजी से सम्बन्धित हैं इस दुगन बर्चा की बात लागू होती है। इस से यह बाहिर है कि यदि हमें विज्ञान और टेक्नासीजी से भरपूर आज के संसार के साथ कदम से कदम मिसा कर बसना है तो बिबबिद्यालयों में शिक्षा पर पहले से भी बहुत अधिक बस दिया जाना बाहिर है।

### ज्ञान के आधुनिक केन्द्र

आजकल के जमाने में बिबबिद्यालयों के बसाबा साथ ही कोई दूसरे ऐस स्थान हों जहाँ पर ज्ञान के बिकास और उसके सृजन की सम्भावना मौजूद हो। पहले जमाने में मन्दिर, पठ या अन्य धार्मिक संस्थानों जगतौर पर ज्ञान के केन्द्र होते थे। यही पर न केवल पठन-पाठन का काम बसता था बरन ज्ञान-बिज्ञान और दखन से सम्बन्धित गंभीर बर्चाएँ भी होती थीं। इस तरह ज्ञान के जर्जन-सृजन में इन संस्थाओं का बड़ा योगदान

वा । धान का अर्जन करना उसका विकास करने और  
 उसे जाने बढ़ाने आदि की जिम्मेदारी अब विद्यविद्यालयों  
 पर ही आ गई है । इसके लिए यह जरूरी है कि विद्य  
 विद्यालयों में ऐसे विद्यार्थी आने जो पूरी सतन के साथ  
 एकाग्रचित होकर अध्ययन कर सकें उनमें उच्च कोटि के  
 शिक्षक होने चाहिए और पाठ्य-पुस्तकें भी उंची क्षिय  
 की होनी चाहिए । विज्ञान में सफलता पाने के लिए ज्ञान  
 और चरित्र निर्माण दोनों जरूरी हैं । जहाँ चरित्र निर्माण  
 के ऊपर ध्यान नहीं दिया जाता वहाँ ज्ञान भी  
 अधूरा रह जाता है और छात्रों के सम्पूर्ण व्यक्ति का  
 पूरा विकास नहीं हो पाता ।

### विज्ञान का भयंकर रूप

विज्ञान की प्रगति का क्या मतलब है ? जैसा कि प्रो  
 फेसर क्लार्क (Le Gros Clark) ने दो वर्ष पहले  
 लिखा है

"For let us not deceive ourselves, the fright-  
 tening question is now beginning to present  
 itself whether the civilisation which mankind  
 has slowly and laboriously built up over a  
 period of many thousand of years can avoid  
 disastrous dissolution as the result of uncontro-

liable (or at any rate uncontrolled) struggles for political power or economic superiority and, indeed, whether the human species can avoid at least partial extinction by the misapplication of its own ingenuity ”

मदिर्य की इस खतरनाक तस्वीर को खत्म करने के क लिए हमें सहयोग और कर्तव्य की उन भाषनाओं पर वाचरण करना होगा जो ऊँचे आदर्शों और नक्ष्यों को पान के लिए बकरी होती हैं ।

विश्वविद्यालय इन महान आदर्शों को कित्त सीमा तक प्राप्त कर सकते हैं, यह इस बात पर निर्भर करता है कि इन सत्त्वामों में अपने ऊँचे आदर्शों के अनुकूल विचारों को बिना डर के विवेक की तुला पर तोलने और हाका को साहस के साथ समाधान कराने की कितनी आजादी है, यहाँ पर ज्ञान विवेक और विनय कित्त हद तक साथ-साथ चलते हैं और मिले-जुले रूप में उनका कितना विचार हो पाता है तथा साथ ही यहाँ पर ज्ञान निष्ठा और चरित्र को बनाने पर कित्त हद तक बल दिया जाता है उनका कितना सम्मान दिया जाता है और कहीं तक रोजाना के जीवन को इनके अनुसार ढाला जाता है ।

## विज्ञान और इतिहास

**विज्ञान** का व्यापक रूप में विकास ऐतिहासिक

दृष्टि से आज के युग को सबसे बड़ी विशेषता बन गया है। पिछले 300 वर्षों में विज्ञान और टेक्नोलॉजी की नयी खोजों और ईशारों ने इतिहास को बहुत बड़ा प्रभावित किया है और इसके कारण आज हम एक ऐसे मोड़ पर पहुँच गये हैं जहाँ आधुनिक विज्ञान मनुष्य के आर्थिक और राजनीतिक इतिहास की दिशा को निर्दिष्ट करने लगा है। आज तो सम्भव सभी मूल ऊर्जा की बात से सहमत होये। लेकिन आज से 300 साल पहले औरों की तो बात ही क्या विज्ञान के बड़े-बड़े विज्ञान भी अपरोक्ष बार्ते करने का साहस नहीं करते थे। इतिहास पर विज्ञान का इतना भीषण और इतना अधिक प्रभाव पड़ा है और आधे दिन की नयी-नयी खोजों के कारण आज तो यह बताना भी कठिन हो गया है कि भावी इतिहास की क्या दिशा होगी। न तो इन बारे में कोई मनुष्यवादी ही कर सकता है और न निर्दिष्ट रूप में कुछ कहा ही जा सकता है। आधुनिक विज्ञान की मौलिक

लोगों में सम्मानना का ऐसा अंश निहित है जो  
 माबी घटनाओं के मामूली सम्भावित अंश में कोई  
 सम्बन्ध नहीं रखता क्योंकि विज्ञान में सैद्धान्तिक लोगों  
 के बारे में विस्तृत निश्चित रूप में कुछ भी कहना सम्भव  
 नहीं है। इतिहास में ऊपर जो अनिश्चितता की बात  
 कही गयी है उसका सम्बन्ध ऐतिहासिक घटनाओं की अनि-  
 श्चिताओं के पहले से नहीं है। ऐतिहासिक घटनाएँ जहाँ  
 एक और मनुष्य की स्वतन्त्र कृति और सज्जनात्मकता से प्र-  
 बन्धित होती हैं वहाँ दूसरी ओर इनके मुद्दाबन्धे आवश्यकताओं  
 के कारण अनिवार्यता और नियमन का अंश भी उन पर  
 पड़ता है। सवाल उठता है कि क्या आदमी का इतिहास  
 को गतिविधियों पर सीधा नियंत्रण है? या इतिहास की  
 धारा उसे स्वयं ही बहुते हुए तिनके के समान एक पुत्र  
 निर्धारित मार्ग पर ले जाती है? यह एक ऐसा सवाल है  
 जिसका अभी तक जवाब नहीं दिया जा सका है। और  
 यह सवाल उचित है, या नहीं इसके बारे में भी हम  
 निश्चित रूप से कुछ नहीं कह सकते।

**इतिहासकार और भौतिक शास्त्री**

इतिहासकार और मानवतावादी बहुत पहले से ही  
 मान भीमाना की कुछ ऐसी भ्रमभूत बातों का उल्लेख  
 करते रहे हैं जिसके बारे में आज के भौतिक शास्त्रियों



को परीक्षणों से प्राप्त परमाणु-अणुओं के विभिन्न व्यवहार के कारण सोचने के लिये मजबूर होना पड़ा है। यह एक मानी हुई बात है कि जब हम किसी प्राचीन सभ्यता या समाज के बारे में विचार करें तो हमें इसमें बहुत लाभ पानी बरछनी चाहिए। क्योंकि अन्तर देखा होता है कि हम उस समाज या सभ्यता की चर्चा करने समय तत्कालीन विचारों में बह जाते हैं और वे विचार हमें प्रभावित भी करते हैं। उदाहरण के लिये हो सकता है कि इन प्रभावित करने वाली बातों में बेस चण्ड प्रजातन्त्र आदि भी शामिल हो। पर वे विचार तो प्राथमिक हैं। इन विचारों की पुच्छसूनि में प्राचीन सभ्यता और संस्कृति की बात सोचना मुक्ति समथ नहीं है फिर मने ही अमरी वीर पर इन बातों में और प्राचीन सभ्यता और संस्कृति में विगका हम अध्ययन कर रहे हैं कुछ समानता हो।

यही अनुभव आज परमाणु प्रक्रिया के अध्ययन के बारे में लागू किया जा सकता है। उदाहरण के लिए स्थिति और बेस जैसे साधारण मिश्रण भी आज भी प्राथमिक व्यवस्था में इलेक्ट्रॉन के बारे में एणों के स्पों लागू नहीं किये जा सकते जब तक कि हम कुछ विशेष सीमाओं का मान कर उनकी परिमापनों को सीमित न कर दें। परमाणु जीविकी की इस नयी स्थिति के बारे में नील बोहर ने अपने 'वाहुरक मिश्रण' (Principle of

Complementarity) में इसका काटी सटीकरण दिया है। ('मानव और 'विज्ञान' लक्ष में इसकी विचार बर्बा की गई है)। इस विज्ञान में दृष्टिकोण और मान प्रमाणी के विचार में कुछ एसी बातें हैं जो इतिहासकार और नृव्यवसाया के लिए काटी अनपार्या विड हा सकती हैं।

### विज्ञान का इतिहास मानवतावादी

मानव के पुन म विज्ञान और टैक्नासोमी के इतिहास का समीर अध्ययन बहुत जरूरत है। बड़े-बड़े आविष्कारों और मोड़-बाँटों का मिलजुलबंदर बन भी आवश्यक है परन्तु इस मिलजुलबंदर बनन का इतिहास नहीं कहा जा सकता। वास्तव में विज्ञान के विकास और बुद्धि का इतिहास सामाजिक इतिहास का ही एक अंग है। दूसरी बात यह है कि इस विषय का हम छोटे-छोटे इतिहासों में जैसे मौखिकी रसायन शास्त्र आदि के इतिहासों में नहीं बाँट सकते क्योंकि आन्तरिक विज्ञान का इतिहास है क्या? यही न कि प्रगति के साथ-साथ प्राकृतिक विज्ञान इस प्रकार की छोटी-छोटी शाखाओं में बँटा गया और यह बँटवारा ही विज्ञान के इतिहास का एक मौखिक भाग है। इस सम्पूर्ण विषय का सम्बन्ध वैज्ञानिकों से उठना नहीं है जितना कि इतिहासकारों

से है। इसमें शक नहीं कि इसके अध्ययन के लिए विज्ञान को समझने की आवश्यकता है परन्तु साथ ही उन सब साधनों और प्रवृत्तियों को भी बकरत है जो एक इतिहासकार के पास होती हैं।

सैनिक और राजनतिक इतिहास तो ज्ञात तीर से अलग-अलग बनों के हितों के बीच के लड़ाई मयई और संघर्ष से सम्बन्धित हैं परन्तु विज्ञान का इतिहास तो तमाम दुनिया के मनुष्यों की सामूहिक सर्जनशक्त पतिविधियों का बचन करता है न तो बड़ी दुगोल की सीमाएँ हैं न बनों की, और न तिहासों की। विज्ञान का इतिहास मानव के प्राकृतिक खूबियों के उत्पादन के क्षेत्र में की जाने वाली तरफदी का मेधा-बोला है और इसलिए इनकी गोरबीनों की सीमाएँ न तो किसी पास बगह और न किसी साम समय में बँधी हुई हैं। विज्ञान में वहना स्मान सहवीय और सम्मिथित बलों की दिया जाता है और विज्ञान की वड़े मनुष्य की अविश्वम योष्यता और बहुत्वाकाषा में निहित होती है। अगर हम विज्ञान के इतिहास का अध्ययन करें और यह अध्ययन आज के अणु पुन में स्मृत के बनों को भी करया जा सक्ता है तो निरबय ही इनका दुनिया भर के आरबियों की लता पर बड़ा भाठी अरर पड़ेना क्योकि वे बहु समय लकड़े कि बाहुँ दुनिया के लीग अलग-अलग रैजों में

रहते हों अमय-अमय मायाएँ बोलते हों अमय-अमय  
 उनके बर्म हों और अमय-अमय राजनीतिक दृष्टिकोप हों  
 फिर भी वे सब ज्ञान की खोज में एक रहे हैं और एक ही  
 रहने ।

वैज्ञानिक क्षेत्र में भारतीय देन

प्राचीन और मध्य युग में भारत ने विज्ञान और  
 टेक्नोलॉजी में जो कुछ योगदान किया है अभी  
 इसका भी इतिहास लिखा जाना बाकी है । भारत के  
 बहुत से वैज्ञानिकों ने भी विज्ञान में बहुत योगदान किया  
 है । आचार्य रे ने भारतीय रसायन शास्त्र का इतिहास  
 लिखा है, जिसे डा पी० आर रे ने हाल में संशोधित  
 किया है । इसी प्रकार बस और सिंह ने मण्डित शास्त्र में  
 उल्लेखनीय काम किया है लेकिन अभी इस विधा में  
 बहुत जोर की ज़रूरत बाकी है । आगा है कि इस विधा  
 में धीमे ही उचित क्रम उत्पन्न आएँगे ।

यहाँ भारतीय इतिहास से विज्ञान के बारे में एक  
 उदाहरण देना के-सीटे न होगा । आइन्-ए-जकबरी में उल्लेख  
 साधारण पदार्थों के आपेक्षिक घनत्व के बारे में उल्लेख  
 मिलता है । कटीब-कटीब उसी समय यूरोप के वैज्ञानिक  
 साहित्य में भी आपेक्षिक घनत्व का सही मातों में उल्लेख  
 किया गया है । अब मबाम यह चटता है कि क्या आइन्-ए

अफ़रिी में ही हुई सूचनाओं का आभार भारत में ही की गई जोड़-बीन से सम्बन्धित है या उन सूचनाओं को तत्कालीन यूरोप के साहित्य से लिया गया है। मगर यह बात सही है कि भारत में ही यह जोड़-बीन की गई हो सवास यह उठता है कि भारत में रसायनिक क्रियाओं के अध्ययन के लिये रसायनिक-गुना का इस्तेमाल क्यों नहीं किया गया जिससे रसायन शास्त्र को और ऊँचे स्तर पर उठाना जा सकता था। बड़ा बात है कि अफ़रिीय मशीनों के निर्माण बम्बूक बनाने वाले चीपन और एक विधा (कीमियागिरी) में बहुत बिनबस्ती एपता था।

विज्ञान के इतिहास में एक समस्या का हल बनी जाना बाकी है और वह है 300 बप पूर्व पश्चिमी यूरोप में बैज्ञानिक चान्ति का आरम्भ। सवास यह उठता है कि यह चान्ति भारत चीन या प्राचीन यूनान में क्यों नहीं हुई? पूर्वी एशिया में वर्तमान विज्ञान और टेक्नोलॉजी का सुदूर सुदूर विकास क्या नहीं हुआ? मोरम न 'चीन में विज्ञान और नग्यता' नामक अपनी पुस्तक के पृष्ठ 166 पर लिखा है 'यूरोप में विज्ञान के इतिहास के बारे में शायद एक बहुत बड़ी बिकारपूर्व मुल्ती यह है कि वर्तमान विज्ञान और टेक्नोलॉजी और उनके जन्म के समय सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों के बीच टोक-टोक क्या सम्बन्ध था बाहिर है कि

केवल वाचिण्य से सम्बन्धित एक संस्कृति ही वह काम कर सकती थी जिसे जमींदारी-सामन्तवादी सम्मता नहीं कर सकती थी जबकि व्यापारी संस्कृति ही पवित्र-शास्त्र और प्राकृतिक ज्ञान की दो बिन्दुस जलग-जलम घासाजों में ताममेस बैठ सकती थी। मीदम ने उपर्युक्त महान् दृष्टि साठ जगहों में मिल कर मामबता की बहुत बड़ी सेवा की है। वह मिलता है छिर नी बीय

प्रश्नों का समाधान करना बेकार समय गमा जो प्रश्न यज्ञातम्य वस्तुओं से सम्बन्धित हैं। इनमें से कुछ प्रश्न ये हैं (1) क्या संसार जगत् है या नहीं (2) क्या यह अनन्त है या नहीं (3) क्या जीवात्मा दृष्टम्य है या नहीं (4) क्या मृत्यु के बाद भी 'तथापत्' रहते हैं। नहीं

कारण है कि वैज्ञानिक अटकलें सपाने के यह विरुद्ध रहा। यदि भारत में विज्ञान के इतिहास का ट्रेक और व्यवस्थित रूप से अध्ययन किया जाय तो इसमें कोई शक नहीं कि ऐतिहासिक रूप से उपरोक्त महत्त्वपूर्ण और विग वस्य समस्या पर बहुत प्रकाश पड़ेगा।

## विज्ञान और चिकित्सा शास्त्र

**चिकित्सा-विज्ञान भौतिक और वैदिक विज्ञानों**

के विस्तृत क्षेत्र का ही एक अविभाज्य अंग है। इसीलिए चिकित्सा विज्ञान में होने वाली प्रगति बहुत कुछ भौतिकी, रसायन शास्त्र और भूहाणु-जीव-विज्ञान के आधुनिक तरीकों और विधियों के भरपूर प्रयोगों पर निर्भर करती है। इसीलिए प्रगति के लिए यह आवश्यक है कि चिकित्सा विभागों और हमारे बुनियादी विज्ञानों में सम्बन्धित विभागों के बीच निकट सम्पर्क और सहकार बना रहे। हम विश्व-विद्यालय एक बहुत महत्वपूर्ण भूमिका कर सकते हैं।

### सभ्य-युगीय योरोप में चिकित्सा

1343 ई. विज्ञान के इतिहास में एक स्मरणीय वर्ष है। उस वर्ष का प्रसिद्ध संकाया प्रकाशन हुआ। चिकित्सा विज्ञान के इतिहास लिखने वाले सातों की कमी कमी एक वर्ष की आधुनिक विज्ञान का पम्पकाम मान्य है। 1343 में कोपरनिकस ने अपना महान ग्रन्थ प्रकाशित किया जिसमें

उसने सिद्धा कि सौर मंडल का केन्द्र पृथ्वी नहीं है। उसी वर्ष बैसालिब्रोस ने मानव शरीर शास्त्र पर अपना बहुत पन्थ प्रकाशित किया। कोपरनिकस उस समय बोर्नोना विद्यालय का विद्यार्थी था। यह वक़्त में चिकित्सा शास्त्र का विश्वविद्यालय था जो सस्य चिकित्सा तथा ज्योतिष की शिक्षा के लिए बड़ा प्रसिद्ध था। उस युग में अरबी विद्वानों के प्रभाव के कारण फसिद ज्योतिष और कौमियागिरी के वास्तविक विज्ञान भी चिकित्सा-विज्ञान के अन्तर्गत समझे जाते थे। 11 वीं शताब्दी में सेलरनो नामक एक विश्व विद्यालय की स्थापना हुई थी जिसमें फरस चिकित्सा विज्ञान की शिक्षा भी पाठी थी और दूसरे नम्बर पर यूरोप में बोर्नोना नाम का विश्वविद्यालय था। बोर्नोना कं अम्बुदय के साथ साथ सेलरनो की स्थापति समाप्त होती गई। मैं इस बात की और भावना ध्यान दिमागता चाहता हूँ कि पेरिस के समकालीन चार्मिक विश्वविद्यालय के विपरीत बोर्नोना विश्वविद्यालय का शासन विद्यार्थी ही करता था। वे ही प्राध्यापकों की नियुक्ति करते थे और सब कमी वे ही रहानिर होते थे ता उन पर चुर्माता करल थे। अगर किसी प्राध्यापक को एक दिन की भी छुट्टी लेनी पड़ती तो उसे अपने विद्यार्थियों से ही छुट्टी मंजूर करानी पड़ती थी। अगर किसी दिन ऐसा होता कि प्राध्यापक अपने विषय का ऐसा पाठक न बना पाता कि उपस्थिति 5



निष्ठापितों से भी कम हो तो उक्त विन का बेसन काट लिया जाता था। अथवा प्राप्तापन नगर से बाहर कहीं छुट्टी पाना चाहता तो छपे बापठ जाने के लिए अमानत क रूप में कुछ पैसे जमा करने पड़ते थे। कस्ता में मायन बैठ समक किसी अप्पापक को यह इजाजत नहीं थी कि वह किसी कठिनार्ई का समाधान बाह म करे क्योंकि इत बात से यह भय बना खूता था कि कही प्राप्तापक उक्त कठिनार्ई के समाधान की बिसभुल ही टाल न जाय। परीछा में बैठने वाले समीहवार को यह शपथ ग्रहण करनी पड़ती थी कि वह परीछक को कोई रिबत नही देना और इसी प्रकार परीछक को भी यह शपथ लनी पड़ती थी कि वह कोई रिबत नही लेना।

सन् 1543 में बेसासिबोस ने मानक की खरीर रचना क सम्बन्ध में अपनी एक पुस्तक 'डी कैंडिरियस ह्युमिन कीरपोरिस' प्रकाशित की। वास्तव में बिसियन हाबे ने बहुत कुछ बेसासिबोस से ही ग्रहण किया। उदाहरण के लिए सन् 1628 में हाबे ने एक नंबर के बारे में अपनी एक पुस्तक प्रकाशित की। हा हाबे को अपनी इन पुस्तक लिखने का बड़ा अभियोग उठाना पड़ा और उत्तरी प्रिंटस मर पड़ गयी क्योंकि मान सोचने लय कि इतने वर्षों से स्वीडार की कई मायपताओ क बिरुद मिगके बासा डाक्टर क्या भला बिरवपनीय हो सकता है ? 1543 ई० में बार्डानो

ने बीजगणित पर अपनी प्रसिद्ध पुस्तक सैटिंग मापा में  
 लिखी। इसका नाम था "मासं मैयना"। कार्डानो के समय  
 भी चिकित्सा विज्ञान और फलित ज्योतिष दोनों एक ही  
 विज्ञान के अन्तर्गत समझे जाते थे जिसे ज्योतिष चिकित्सा  
 विज्ञान के अन्तर्गत समझे जाते थे। इस फलित ज्योतिष के नियम और  
 दास्य कहते थे। इस फलित ज्योतिष के नियम और  
 रीति रिवाजों के अनुसार औपनि उपचार किया जाता था।  
 कार्डानो ने 50 वर्ष की उम्र तक पहुँचते पहुँचते बहुत  
 फलित (बुद्धि बोलने वाले विज्ञान के रूप में) प्राप्त कर ली  
 और वह यूरोप के डा बैसासिमीस के बाह दूसरे स्थान  
 पर माना जाने लगा। उसकी सेवाओं के कारण लोगों ने  
 उसकी बहुत प्रशंसा की और धानदार लोके भेजे। एक बार  
 इंग्लैण्ड के 15 वर्षीय सम्राट् एडवर्ड पण्टम् ने कार्डानो से  
 अपनी जगमगी बनाने की प्रार्थना की। कार्डानो ने 1552  
 में यह भविष्यवाणी की कि एडवर्ड 55 वर्ष 3 महीने 17  
 दिन की अवस्था में स्वर्गवासी हो जायेगा। परन्तु एडवर्ड  
 16 वें ही वर्ष मर गया। इस गलत भविष्यवाणी के  
 बारे में अपनी सफ़ाई देते हुये कार्डानो ने लिखा कि  
 (क) उसने मजबूर होकर अपने निर्णय क विरुद्ध जगमगी  
 बनाई थी (ख) उसने ज्योतिष क फलित में कुछ यत्नियाँ  
 कर ली थी जिनका कारण बहुत जल्दी म पणना करना  
 था (ग) उस संदेह हो गया था कि सम्राट् भविष्य  
 नहीं जियेगा और (घ) सम्राट् को बहुर दिया गया है।

## विज्ञान की अद्भुत प्रगति

पिछले चार सौ वर्षों के दौरान विद्यमान रूप से पिछले कुछ वर्षों में भौतिक विज्ञान और चिकित्सा विज्ञान में अद्भुत प्रगति हुई है। हमें कोई शक नहीं कि मनुष्य के विज्ञान में और क्षेत्रों को अपना अद्भुतपूर्ण प्रगति की है। इसका मुख्य कारण यह है कि विज्ञान के क्षेत्र में मनुष्य के बल वस्तुनिष्ठा सम्पूर्णता और उन्नतता की सीमा में लया रहता है और उसे तकलीफ दबायीं को छोड़ना पड़ता है। परन्तु राजनीति या अन्य क्षेत्र में एसी कोई बात नहीं है। विज्ञान के क्षेत्र में सहसा को बढ़ावा दिया जाता है न कि प्रतिव्ययिता को। आधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधान के क्षेत्र में आधुनिक-भौतिकी अन्तरिक्ष की खोज तथा क्यूहाण्टम वैज्ञानिक तबसे अधिक विचारोत्तेजक विषय हैं। कहा जाता है कि मनुष्य के पिछले 10 वर्षों में जीवन की सबसे अधिक प्रविधियों जैसे प्लेके (Gene) की प्रगति प्राचीन संरचना आदि के बारे में हमें कुछ नया ज्ञान दिया है जिसका कुछ विचारों पिछली प्रविधियों में भी नहीं सीखा जा गया था।

## भारत की गौरवमयी परम्पराएँ

निम्नलिखित में आने वाले भारत वैज्ञानिक नामों के हमारा ध्यान दान होना चाहिए वह तो एक बड़ी बात है

पर एक छोटी सी बात ही से नीबिए कि अगर हम अपने ही राष्ट्र को कल्याणकारी बनाना चाहें तो भी हमें शिक्षा और अनुसंधान पर जोर देना होगा। शिक्षा से अधिक महत्वपूर्ण और लाभकारी विनियोजन कोई और नहीं है। समृद्धि और उन्नति की कुंजी ऊँचा ज्ञान और परिश्रम है। प्राचीन समय में हमारे देश में शिक्षा और धर्म-निष्ठता की बड़ी शानदार परम्पराएँ रही हैं। वे परम्पराएँ चिकि-त्सा-क्षेत्र में भी बड़ी पौरवर्णनी रही हैं। इस देश में कौन ऐसा व्यक्ति है जो सुभ्रुत और चरक के नाम को न जानता हो? वे अपने युग के सबसे प्रसिद्ध चिकित्साशास्त्री थे। मान-स्यकता इस बात की है कि आज हम अपनी प्राचीन परम्पराओं से शक्ति ग्रहण करें और प्रेरणा में और ज्ञान और अनुसंधान के क्षेत्र में प्रकृति को नियंत्रित कर सबसे लाभ उठाने और उसे समझने के लिए उल्गाह और त्याग की भावना अपनायें। यह बात जासूसी से चिकित्सा क्षेत्र में लागू होती है। एक प्राचीन कहावत है जिसका अभिप्राय यह है कि "जिस चिकित्सक में कोष्ठक बुद्धिमत्ता और त्याग की भावना हो उससे तो वैद्यता भी ईर्ष्या करते हैं।" मेरा अपना विचार है कि हम उन महान् परम्पराओं को तो निमार्ण ही साथ ही सुभ्रुत और चरक जैसे महान् पंडितों की यादवार को बनाये

रपने के लिए मेडिकल कामेजों में उनके नाम में कुछ प्रोटोकोलों के पर और अनुसंधान कृतियाँ भी शामिल करें ।

चरक और सुश्रुत ने अपने ग्रन्थों में चिकित्सा के विचारधरों के का गुण बताये हैं उनका संक्षेप में नीचे उल्लेख किया जाता है —

पाम्ब स्वभाव सज्जनता उदार प्रकृति निर्गममात्रता बुद्धिमत्ता मुहूर्त्तगति स्मरण शक्ति, उदारप्रेता रक्षण न रभ्यन् मानेन्द्रियों में समर्पता भाईबद्धीनता व्यसन शिना बन्धुओं में महरी बैठ शीघ्र चरु न हो चरित्र में सुदृढता प्रम कोमल अभ्यसनशीलता विज्ञान का प्रदर्शन नाम शीलता दोष शून्यता का अभाव लक्ष प्राणियों का हित चाहता अप्यापक का आजाबारी स्नेहमिलता मुदुभाषण बिल की शिपता मतिष्क की पवित्रता मत्सज्जता सुदृढ चरित्र संतोष शिष्टशीलता और मध्यचारिता ।

चिकित्सा शास्त्र में रोगी पण

इन भावों की बुझिका के संदर्भ में एक छान के लिए चिकित्सकों के व्यवहार में भी रोगी पण के बारे में कुछ करना चाहिए। अन्वेषण में जुन 1961 में 1961 में एक बरी ।

औरपिया ५

५

पर कहा गया है कि भारत में जो बफार्ड पेटेंट की जाती है उनका सदाहरण बड़ा दिसक्षण है। कीटाणुनाशक औषधियाँ जैसे ओटोमाबसीन और एनोमाबसीन के मुख्य संसार भर की अपेक्षा भारत में सबसे ऊँचे हैं। यह एक विडम्बना है कि दुनिया में जिन देशों में दवाओं की कीमत सबसे ज्यादा है उनमें भारत भी एक देश है जब कि यहाँ प्रति व्यक्ति आमदनी बहुत कम है। इस प्रकार प्रति व्यक्ति आमदनी और दवाओं के कीमत के स्तर के बीच का अनुपात कितना उल्टा है। दूसरे देशों में भी कहीं कहीं दवाओं के नामों को छोड़कर ब्रैंड नाम पेटेंट कराये जाते हैं और इस तरह चिकित्सकों को दवाओं के सिवा दवा का ब्रैंड नाम भिन्न-भिन्न के बजाय पेटेंटित नाम मिलाने को प्रोत्साहन दिया जाता है। इस तरह की एक दवा कोरटेज नाम से पेटेंट कराई गई है। इस नाम से यह दवा 7 डॉलर में मिलती है जबकि बिस्कुल नाम की दवा अपने वैज्ञानिक नाम यानि डिस्सोयफोर्टिबोलेट रोन एनीटेज से जरीबी बाय ती इसका नाम याद एक डॉलर होता। इस सम्बन्ध में अमेरिकी कांग्रेस को एक कमेटी के सामने पेशाही दिये हुये डा० सोमोयन यार्ब को आमदनी में वृद्धि कासेज में जेपज विज्ञान के प्रोफेसर है कहा था "दवाओं को अलग-अलग नाम देने से पैसा हुई समझ क्यूँ की घनभने के लिये यदि हम यह मान

रगने के लिए मेडिकल काभेजों में उनके नाम से कुछ प्रोफेसरों के पद और अनुसंधान वृत्तियाँ भी कायम करें ।

चरक और सुषुत ने अपने ग्रंथों में चिकित्सा के विद्यार्थियों के लिये कुछ बताया है उनका संक्षेप में नीचे उल्लेख किया जाता है —

शान्त स्वभाव संयमता उत्तम प्रवृत्ति निरीभमानता बुद्धिमत्ता मुक्तमनसि स्मरण शक्ति, उत्थारथता ध्यान में स्थान प्राप्तिशक्ति में सम्यक्ता आर्द्धवर्तनीयता म्यमन हीनता बस्तुओं में पहरी पीठ शीघ्र बुद्ध न हो चरित्र में पुरुषता प्रेम शीघ्रत अल्पयत्नशीलता चित्रान का प्रदर्शन साम हीनता दोष मूढता का अभाव एक प्राणियों का जित चाहना अप्यापक का आक्रानारी रनेहृमिच्छता सुभुभापन बिन की शिब्रता मरिच्छक को परिच्छता नसंयमता पुरु बरत्र मनोय र्प्याहीनता और नस्यबाधिता ।

**चिकित्सा शास्त्र में रोगी पक्ष**

इन आर्यों की भूमिका के अन्तर्भ में एक शब्द क मिला चिकित्सकों के व्यवसाय में में रोगी पक्ष के बारे में कुछ बताना चाहूँगा । इन सम्बन्ध में जून 1961 में अमेरिका में एक बड़ी निगमन रिपोर्ट प्रकाशित हुई जो मान की औपचरिया को लोके गिरी बतलाती है । इसके पृष्ठ 17





वें कि औपधि निर्माता 'तस्वी फर्मियों' का निर्माण करने लगे जाते हैं तो ऐसी फर्मियां दुकानों पर अलग-अलग नाम से मिलेंगी और उन फर्मियों के एक साल में निर्माताओं द्वारा 300-500 तक नए नाम दे दिए जायेंगे। आज बहुत कुछ वही बात औपधियों के बारे में मात्र होती है।"

### कुछ काम की बातें

इब्राहिमेटोविच पावलोव (1849-1936) को माधु निक मुन के एक बहुत बड़े चिकित्सा शास्त्री से कहा है

'संतोष और गम्भीरता का आवश्यक भागीदार। तप्यों को जानो उनको आपस में तुलना करो और उनका नपव करो।'

'विषय से सम्पूर्णता प्राप्त करो। एक ऐठ ही जैसे चिड़िया बिना आराम किए अपने पंखों के बल पर हवा में उड़ सकती है। तप्य ही वैज्ञानिक के लिए हवा है और बिना उनके तुल नहीं उड़ सकते। तप्यों के बिना तुम्हारे मिशान्त ध्यर्ष के बलन निरु होयें।

'भीगो प्रयोग करा। अभीमांति देगी। पर तप्यों की बेबल मतव पर मत रू। बलिक महुराई म पट्टीको। प्राइ निक रहस्यो म गहरी वेठ होनी चाहिए और बराबर उन नियमों की मोत्र करने रू। जिन पर के रहस्य आका रिठ है।

‘दुमरी बात है घामीनता । यह कभी मत मोचो कि  
तुम सभी कुछ पहस से ही जानते हो । मने ही लोग समझे  
कि तुम बहुत बात ही पर तुम्हें यह कहने का साहस  
होगा चाहिए कि मैं अज्ञानी हूँ ।

कभी समझ न करो समझ स आदमी जिही बन जावा  
है और उसका मतीका यह होता है कि आदमी कोई  
उपयामी समाह या मित्रतापुन सहायता मेने मे इनकार  
कर देना है और इस प्रकार मनुष्य बस्तुनिष्ठ नहीं रह  
जाता ।

‘तीसरी चीज है ज्ञान के लिय बर्नीय निष्ठ । ज्ञान तो  
मनुष्य सारे बग्न भर भी बचित करता रहे तो काष्ठी  
नहीं है । एक बग्न क्या कई बग्नो की सापना भी ज्ञान  
के लिय काष्ठी नहीं हाती । इसलिय अपन काम और  
अनुसंधान में निरन्तर निष्ठ बनाये रना ।’

यह बलती नहीं है कि सभी वैज्ञानिकों को स्वाति  
मित माकूम आमदनी मिले या वैसा मित । लेकिन इसकी  
बात का निदिष्ट है कि विज्ञान और चिकित्सा के क्षेत्र में  
मनुष्य कुछ एसा संशय प्राप्त करता है जो उसकी आत्मा  
को सप्रत करता है और त्रियता महत्त्व स्थायी है ।

---

एक बग्न के विरुद्ध बलती बलती के बर्नीयता परती  
362 के विषय का काल्प ।



वि  
ज्ञा  
न

और

प्र  
ति  
र  
क्षा

2

सुनिष्ठ और वैशमिष्ठ का 'साय साय पीचने  
का विचार' कुछ नया सा लगता है पर कागज के पुप  
में प्रतिरक्षा रक्ष की प्रकृति के क्रिये यह सह विज्ञान  
अनिवार्य है।

## विज्ञान और प्रतिरक्षा

विज्ञान की बुनियाद परीक्षण और निरीक्षण पर आधारित है। इसलिये यदि कोई वैज्ञानिक वर्तमान ज्ञान की धारा से बसम पड़ कर अपने प्रयोग निरीक्षण और सिद्धान्त विकसित करता है तो वे सीमित और एकांगी होते हैं। इसलिये प्रत्येक वैज्ञानिक के लिए यह सबसे जरूरी है कि वह अपने कामों के वैज्ञानिकों के सिद्धान्तों को समझे-सूझे और उनके परीक्षणों और निरीक्षणों का अधिक से अधिक अध्ययन करे। ऐसा होने पर वहाँ वैज्ञानिक एक-दूसरे के बिचारों से परिचित होते हैं वहाँ वैज्ञानिक सूचनाओं और बिचारों का निरन्तर सेन-सेन विज्ञान की प्रति को निश्चित करने में महत्वपूर्ण भाग बढ़ करता है।

जानकारी से पहिले भारतीय वैज्ञानिकों के लिए प्रति रक्षा विज्ञान के बरबादे बन्द थे। इसलिये यह विषय उनक लिए कठोर-कठोर झूठा ही था। इसके कुछ ऐतिहासिक कारण थे। उस जमाने में इन्के-दुल्क वैज्ञानिकों को यह सुविधा मिली हुई थी। पर ऐस वैज्ञानिक भी जो

घरवाली महकमों में लपेटे हुए वे केवल स्टोरों में रखे प्रतिरक्षा सम्बन्धी सामान की बाब पड़ताल ही करते थे।

द्वितीय महायुद्ध के दौरान में कुछ टैक्नीकल संस्थानों की सरकार ने स्थापना की और इसके साथ ही कागपुर, तिरुची आदि हमारे स्थानों में कुछ प्रयोगशालाएँ भी खोली गईं। पर इन संस्थाओं का काम भी बहुत कुछ बाब पड़ताम तक ही सीमित था।

आगामी दो बार सन् 1948 के मन्त में 'प्रतिरक्षा विज्ञान मन्डल' नाम की एक संस्था कायम की गई। इसका काम आमतौर पर प्रतिरक्षा विज्ञान की विभिन्न वैज्ञानिक बुनियादी बातों और मसलियाओं से सम्बन्धित था। इनका इनमें से एक विषय 'औद्योगिक रिमर्च' का यानी विभिन्न अस्त्र-दार्तों को अमली युद्ध पैसा बनाकर बना कर उनकी परख करना।

कुछ बर बाद दिल्ली में एक प्रतिरक्षा विज्ञान प्रयोगशाला स्थापित की गई और इसी तरह की ही और नौसेना अनुसंधान प्रयोगशालाएँ खोली गईं। प्रतिरक्षा विज्ञान के स्तर को उँचा उठाने के लिए, हमको और अधिक व्यापक बनाने के लिए और हमकी गति को तेज करने के लिए अग्रुर्ष प्रतिरक्षा अनुसंधान के विभाग के प्रयत्नों में भारी महतीनी की गई। इसके कमसकम तकनीकी विभाग बनाने और प्रतिरक्षा प्रयोगशालाएँ खोलने का विचार

प्रतिरक्षा अनुसंधान तथा विकास संघटन नाम का एक  
बड़ा महकमा बनाया गया।

इन सभी संस्थाओं में आमतौर पर कुछ योजनाएँ  
बनाकर उसके अनुसार काम किया जाता है। इनमें से अधि-  
कतत योजनाओं में पहिले सोव्हीन की वे चीजें हाथ में ली  
जाती हैं जिसकी प्रतिरक्षा विभाग सिफरिष करता है।  
साथ ही वैज्ञानिक संस्थाओं से भी इन सभी योजनाओं के  
बारे में सलाह करली जाती है।

### वैज्ञानिक और सैनिक अधिकारी

प्रतिरक्षा वैज्ञानिकों में सैद्धान्तिक और व्यावहारिक  
विज्ञानवेत्ता इजीनियर व सिस्म-विशेषज्ञ सभी आते हैं।  
प्रतिरक्षा विभाग के क्षेत्र में यह बहुत जरूरी है कि वहाँ  
के वैज्ञानिक और सैनिक अधिकारी कम्पे से कम्पा मिझा  
कर काम करें। प्रायः सैनिक अधिकारी अनुसंधान केन्द्रों  
में 2-3 साल काम करने के बाद अपनी यूनिटों को वापस  
जाते जाते हैं। जिसमें उनका मुख्य उद्देश्य यह होता है  
कि वे सोव्हीन व्यवहार में आने वाली विफलताओं और  
समस्याओं को समझते हैं और इसीलिए वे ही इनके बारे  
में बता सकत हैं। इसलिये उनकी उपस्थिति से यह लाभ  
होता है कि प्रतिरक्षा विज्ञान संस्थानों में होने वाले काम  
में सैनिक अधिकारियों का पूरा विश्वास होता है और



यह है भी बहुत जरूरी। इसलिए वैज्ञानिकों को भी इतना बात के लिए प्रोत्साहन दिया जाता है कि वे सेना के स्कूलों के होने वाले कोर्सों और "डिफेंस एजिटिव स्ट्राफ कामज" के कोर्स में जायें। वैज्ञानिक ग्राम सेना के संस्थानों में जाते हैं और वहाँ का अध्ययन करते हैं।

1932 में फिरेकी में आमेरिस्ट के अध्ययन के लिए एक संस्था खोली गई। इस संस्था में इन्जिनियरों के मौखिक सिद्धान्तों के बारे में कुछ नूतने हुए वैज्ञानिक अधिकारियों को प्रशिक्षण दिया जाता है। इस संस्था में प्रतिरक्षा विज्ञान के कुछ विशेष विषयों पर अनुसंधान का काम होता है। यह संस्था तमसय वैसा ही काम करती है जैसा कि एक विश्वविद्यालय से सम्बन्धित कामेज काम करता है। इस संस्था में अर्धनिक वैज्ञानिक भी कई विश्वविद्यालयों और संस्थानों में जाते हैं और प्रतिरक्षा के अलग अलग पहलुओं के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं। इस प्रकार प्रतिरक्षा-वैज्ञानिकों को भी लाभ पहुँचता है क्योंकि वे भारतीय वैज्ञानिकों के नये नये विचारों और अनुसंधानों के बारे में जानकारी प्राप्त करने में सक्षम हैं।

### प्रतिरक्षा अनुसंधान

प्रतिरक्षा-वैज्ञानिकों को सहायता एवं सेवा-संभर्न

(कैंडर) तैयार की गई है। इस कैंडर के बन्धन प्रति रक्षा संशोधन में काम करने वाले सभी वैज्ञानिक वैज्ञानिक हैं जिनका काम अनुसंधान विकास विज्ञान या निरीक्षण से सम्बन्धित है। इस कैंडर के बनाने का उद्देश्य यह है कि योग्य और प्रतिभावान वैज्ञानिक हमारे आरक्षण हो सकें और इसमें स्टाई रह सकें। प्रतिरक्षा संशोधन एक डिप्लोमा साइंस बरनम (एम) भी निकालता है जिसका उद्देश्य सेना में रुचि रखने वाले लोगों में अनुसंधान सम्बन्धी रुचि पैदा करना है।

प्रतिरक्षा वैज्ञानिकों की समय समय पर सौष्ठव्य होगी रखी है जिनमें विश्वविद्यालयों और अनुसंधान संस्थाओं से बड़े बड़े वैज्ञानिकों को बुलाया जाता है। पिछले वर्षों में प्रशिक्षण प्राप्त राष्ट्रीय अनुसंधान तथा ट्राइस्टर पर सौष्ठव्य हुए। इन सौष्ठव्यों में विश्व विद्यालयों के वैज्ञानिकों के भाग लेने के एकस्वरूप अब कई विश्वविद्यालयों ने गणितशास्त्र के स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम में व्यावहारिक वैज्ञानिक (प्रशिक्षण प्राप्त विज्ञान) को भी शामिल कर लिया है। पिछले दो तीन वर्षों में इन विषय पर कुछ अनुसंधान लेख प्रकाशित किये गये हैं।

पिछले कुछ वर्षों में प्रतिरक्षा विज्ञान प्रयोगशालाओं में निम्नलिखित विषयों पर अनुसंधान किये गये हैं—वैज्ञानिक (प्रशिक्षण प्राप्त) बिस्कोटक वायुमण्डलीय शास्त्र

शैत्य मनोविज्ञान सामरिक अनुसंधान तथा इनसे संबंधित विषय । पिछले दिनों संस्थाओं से सम्बन्धित संस्था ( इन्स्टीट्यूट आफ़ थर्मोमेट स्टेडीज ) में विस्फोटकों की रचना के सम्बन्ध में और विस्फोट विद्या पर कुछ अनुसंधान क्रिये पये और प्रतिरक्षा विज्ञान प्रयोगशाला में भी इसी तरह के कुछ अनुसंधान हुए । यहाँ पर टेम्पों आदि की सीढ़े की बारों का फोहन बारीक त्वांश तरह की गोमियों को सवारने और सुधारने का काम किया गया है । इनकी विद्येपता यह होती है जब इनका विस्फोट होता है तो इनमें विस्फोटक पदार्थ बजाय बिगारने के एक ही दिशा में केन्द्रित हो जाते हैं जिससे यह संकुच पाठि तन्म पर ही केन्द्रित हो जाती है । इनमें से निकले मूल्य कणों की पति बहुत तेज धानी करीब 10 मीस प्रति मीरेण्ड की धाम से पिचमी धातु की पुरार के रूप में निकलती है । इन सिद्धान्त के आधार पर इन इस मतीय पर पट्टेच है कि ऊपरी वायुमण्डल में धातुओं के बहुत ही मूल्य कणों को बिजा जा सकता है और अगर इन प्रकार के प्रयोग क्रिये जायें तो बहुत सम्भव है कि वे अणु विज्ञान के मत्सब के नाबित होंगे । यह नाम बिना बिनी बिरोध बठिनाई क किया जा सकता है कथनों कि यह नाम तन्म या बीना बाब्द मुष्कारों की महायना में आधारित हैं भ्रम कर विरचोदित किया जाय ( गोतनी



सुधार करना। पहले उद्देश्य की पूर्ति के लिए यह जरूरी है कि सामरिक अनुसंधान का काम जारी रखा जाय जब कि दूसरे उद्देश्य की पूर्ति के लिए देश के औद्योगिक उत्पादन तथा ऊँचे दर्जे का वैज्ञानिक ज्ञान हासिल करना जरूरी है।

महाई से सम्बन्धित अनुसंधान का मतलब है कि युद्ध में काम आने वाले हथियारों की प्रभावकारिता का वैज्ञानिक अध्ययन और विरलेषण किया जाय और इन प्रकार मिलने वाले नतीजों से फायदा उठया जाय। पिछली महाई में यह एक महत्वपूर्ण विषय रहा है। त्रिठनी मेहनत इन विषय की मोरबीन पर की गई जायद ही किसी और विषय पर इतनी ही मेहनत इतनी बारबर लाबित हुई हो। प्रलिंगता के अनुसंधानक्षेत्र में हथियारों की युद्ध में प्रभावकारिता (हथियार कीयन और हथियारों के इस्तेमाल से विध्ययतगारी) आशयन अपर सबसे ज्यादा नहीं ही कम से कम एक बहुत महत्वपूर्ण विषय बन गया है। आशयन जब कभी किसी नव हथियार का आबिष्कार हुंला है तो यह विषय बनना कि बहू नया हथियार इन समय इस्तेमाल किये जाने वाले हथियार की अपेक्षा ज्यादा अच्छा है यह एक सबसे ज्यादा बेबीदा गवान बन जाता है और यह अपर निर्णय कर भी गया जाय कि नया हथियार पुगाने की अपेक्षा अच्छा है तो एक



अधिक से अधिक साम उद्य संकलते हैं और स्वामीय  
 आवश्यकताओं के अनुसार उनमें सुधार भी कर सकते हैं।  
 किफ इतना ही नहीं बल्कि हम हथियारों को अपनी  
 आवश्यकता के अनुसार छांट भी सकते हैं।

यह कहने की जरूरत नहीं है कि किसी भी देश की  
 अर्थ-राज्य की नीति उस देश की बुद्ध चाल तथा अन्य  
 आवश्यकताओं पर निर्भर करती है। वास्तव में किसी  
 देश के हथियार उस देश की स्थितियों की अभिव्यक्ति  
 होते हैं। इस विषय में हमें लकीर का फकीर नहीं बनना  
 है और परम्परागत तरीके नहीं बनाने हैं। बल्कि  
 हमारे अन्दर सोचने विचारने की नीतिक्रम होनी चाहिए।  
 हमारे देश के प्रसाधन सीमित हैं। इसलिए यह भी जरूरी  
 है कि हम हथियारों के विज्ञान और विचारन के सिद्धान्तों  
 को अच्छी तरह समझें और अपने सीमित साधनों के  
 मुनाबिक बुद्धिमत्तापूर्वक हथियार छांटें और कम से कम  
 गर्वा करके उनका उत्पादन करें। यह एक सर्वमान्य  
 सिद्धान्त है कि जितना कोई देश गरीब होगा उतनी ही  
 ज्यादा वेगबाधियों को सोचने की जरूरत पड़ेगी। इन  
 विषय में इंग्लैंड की आर्थिक श्री नीतियों गतिविधियों के  
 बारे में 'लाई एपर कोर्ड' के ये शब्द उल्लेखनीय हैं।  
 "इस विषयों के बारे में हमें ध्यान रखना है हमारे पास नहीं है  
 । हमें ज्यादा सोचने की जरूरत है"।

यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि किसी भी देश की सशस्त्र सेनाओं के हथियारों और साज-सामान की कार्यकुशलता और स्तर मुख्यरूप में उस देश की तकनीकी और औद्योगिक क्षमता पर निर्भर करता है। इस प्रकार अगर इन दोनों स्तरों में बहुत ज्यादा फर्क होगा है तो यह फर्क ज्यादा दिन तक टिका नहीं रह सकता। कहने का मतलब यह है कि जितना कोई मुस्क ज्यादा औद्योगिक रूप से प्रगतिशील होगा उतने ही सशस्त्र सेनाओं के पास हथियार और साज-सामान ज्यादा उन्नत डिस्म के होंगे। आमतौर से देखा गया है कि तकनीकी रूप से पिछड़े हुए देशों में आधुनिकतम हथियारों की मांग के बारे में हाथ-हाक मची रहती है और यह जरूरी नहीं है कि यह मांग सेनाओं की ही हो। इसका कारण साफ है। कारण यह है कि आमसौर इस बात का अन्दाजा नहीं लगा पाते कि कौन सी चीज मुश्किल है और कौन सी नहीं कौन सी चीज मुश्किल है और कौन सी आसान और क्या जरूरी है और क्या वैरजरूरी। इनमें सब चीजों का व्यवहार में अन्दाजा लगाना बहुत ही मुश्किल है। आसतौर से उन मुस्कों में जो तकनीकी और आधुनिक सिहाज से पिछड़े हुए हैं यह और भी मुश्किल है। इन सब कार्यों के लिए ऐसे योग्य सैनिक अधिकारी और वैज्ञानिकों की आवश्यकता है जिन में साहस और चरित हो। और यह



सैनिकों को अपने दोरों में अलग अलग छोड़ दिया था। तो चाहिए है कि वे अपने ही ठीके से एकांगी रूप से सोचेंगे। इस दृष्टि से मिस-पुलकर सोचना एक नयी चीज है और समस्याओं का समाधान के लिए बहुत सहायक सिद्ध होती है। नयी हानियों में एक पक्ष दूसरे पक्ष को भी देखता है और उसके बारे में अपनी गलत पूर्व धारणाओं को छोड़ता रहता है। यह चीन्माय्य की बात है कि इस दौर में भारत में परम्परागत तरीकों ने कोई रोड़ा नहीं बटकाया।

कुछ समय पहले की बात है कि मोला बाबर के कुछ पुराने भंडार को ठिकाने लगाने का प्रयास पेश हुआ और वह निगम किया गया कि उन भंडार को समुद्र में डूबा दिया जाय। हुमायूँ की सेना ने कुछ कारणों से यह काम करना पसंद नहीं किया। इसके असावा बात यह भी थी कि इन भंडार को ले जाने में काफी खर्चा होता। मसोम की बात है कि उन समय मिस पुलकर सोचने की बजह से इन समस्या का समाधान निश्चल जाया और उसके फलस्वरूप उन भंडार में बहुत सारी चीजों को अलग अलग करके ठिकाने लगाया गया जिनमें न सिर्फ पैसा बिना शक्ति बिदेगी मुना भी भी बचन हुई।

सैनिकों और वैज्ञानिकों का सहयोग

प्रतिरक्षा और विज्ञान अब बहुत अधिक परस्पर

सम्बन्धित हैं। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि बीजानिकों से हमारा अभिप्राय इंजीनियर आदि से भी है। बीजानिक विन क्षेत्रों में सेना को सहयोग देते हैं वे निम्नलिखित हैं —

(क) हथियारों की उपलब्धि बीजानिक मिल-मिश्र हाथमारों की युद्ध में प्रभावकारिता की जांच पड़ताम करता है और इस निर्माण में सहायता देता है कि अपनी लड़ाने की शक्त के अनुसार हम कौन से सबसे अधिक प्रभावकारी हथियार खरीद सकते हैं।

(ख) वर्तमान हथियारों का अधिकतम प्रयोग यह अवधिक महत्वपूर्ण विषय है और इसमें युद्ध से सम्बन्धित बीजानिकों के अनुसन्धान का महत्वपूर्ण योग रहा है और जिसे सभी मानते हैं। जितनी मेहनत इस क्षेत्र में की जाती रही है उसके अनुपात में हमका सबसे अधिक लाभ भी मिला है।

(ग) वर्तमान हथियारों में सुधार इस विधि द्वारा हथियारों को स्थानीय स्थितियों के अनुकूल बनाया जाता है जवाहरलाल के लिए रदार में देश-विदेश के अनुसार परिवर्तन।

(घ) अनुत्तमान विकास और द्विबीजन भारत में नये हथियार बनाना इनका मुख्य काम है।

(च) विदेशों में इस्तेमाल किये जाने वाले जप्त

हृदयियों का अध्ययन और इस विषय में अनुसंधान ।

(छ) सर्वथा नये हृदयियों का विकास और अनुसंधान ।

(ज) निरीक्षण की विधियों में सुधार ।

## सूक्ष्मभूत सिद्धांत

अब हम यही प्रतिरक्षा अनुसंधान के नाम से सम्बन्धित कुछ सूक्ष्मभूत सिद्धांतों का संक्षेप में उल्लेख करेंगे । ये सिद्धांत निम्नलिखित हैं —

(1) प्रतिरक्षा में अनुसंधान और विकास दो अलग अलग चीजें नहीं हैं । बल्कि यह एक सम्बन्धित कार्यक्रम है । इन दोनों के बीच कोई वास्तविक विभाजन रखा नहीं है । अनुसंधान-विकास का सम्बन्ध उत्पादन और निरीक्षण में है ।

(2) प्रतिरक्षा के अनुसंधान और विकास का कार्य हम तरह होता चाहिए ताकि हम नाम में मैनाओं को कुछ विकास हो । जिन लोगों को अनुसंधान और विकास का भाव उठाना है उनकी आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाय न कि उन्हें निरक्षित किया जाय । इनका नियंत्रण और निरीक्षण केवल विद्वान व्यक्तियों के हाथ में होना चाहिए ।

(3) प्रतिरक्षा अनुसंधान और विकास का नाम

देश के सामान्य अनुसंधान और विकास के नाम से मेल  
लावा हुआ होना चाहिए।

(4) सेनाओं और बलों के संगठन और काम करने  
की परिस्थितियाँ ऐसी होनी चाहिए ताकि अणु से अणु  
और योग्य से योग्य जादमी इसमें आ सकें और अपना  
काम जारी रख सकें।

हमारे देश में वैज्ञानिक प्रसाधन जिसमें वैज्ञानिक  
और विज्ञान की सामग्री दोनों शामिल है बहुत ही  
सीमित है। इसलिए जबरन इस बात की है कि हम सबसे  
महत्वपूर्ण समस्याओं पर ही अपना ध्यान केन्द्रित करें  
और उनके समाधान के लिए प्रयत्न करें। हम इस क्षेत्र को  
बहुत ध्यान नहीं देना चाहिए। वैज्ञानिकों को सैनिकों  
से भी बहुत कुछ सीखना है क्योंकि सैनिकों के पास सशस्त्रों  
पुराना अनुभव है, रणनीति से सम्बन्धित चिन्तन है और  
सामरिक मामलों का ज्ञान है।

हमें पहले दिन समस्याओं के निवारण में लगना  
चाहिए और दिन समस्याओं को प्राथमिकता देनी चाहिए—  
यह एक ठोस विषय है जिसमें वास्तव में बहुत कठिनाई  
देव होती है। इसलिए समस्याओं को प्राथमिकता देने समय  
तीन बातें ज़रूरी पर ध्यान में रगनी चाहिए। पहली  
बात यह है कि वह समस्या सीधी सेना से सम्बन्धित हो  
और उन पर की गई सोचबीन से सेना को सीधा लाभ

हविषारों का अध्ययन और इस विषय में अनुसंधान ।

(उ) सर्वत्र नये हविषारों का विकास और अनुसंधान ।

(ख) निरीक्षण की विधियों में सुधार ।

### मुसभूत सिद्धांत

अब हम यहाँ प्रतिरक्षा अनुसंधान के नाम से सम्बन्धित कुछ मुसभूत सिद्धांतों का संक्षेप में उल्लेख करेंगे । ये सिद्धांत निम्नलिखित हैं —

(1) प्रतिरक्षा में अनुसंधान और विकास दो अलग अलग धेरे नहीं हैं । बल्कि यह एक समन्वित कार्यक्रम है । इन दोनों के बीच कोई कारखानिक विभाजन ऐसा नहीं है । अनुसंधान-विकास का सम्बन्ध उत्पादन और निरीक्षण से है ।

(2) प्रतिरक्षा के अनुसंधान और विकास का कार्य इन तरह होना चाहिए ताकि इन नाम में केनाओं को कुछ बिरबाह हो । जिन सीमों को अनुसंधान और विकास का साम्राज्य छूटना है उनकी आवश्यकताओं को ध्यान में रखा जाय ताकि उन्हें निरदिष्ट दिया जाय । एनवा निर्वन्धन और निरदिष्ट केवल निरुपेय व्यक्तियों के हाथ में हाथ चाहिए ।

(3) प्रतिरक्षा अनुसंधान और विकास का नाम

देश के सामान्य अनुसंधान और विकास के काम से मेरा  
बाधा हुआ होना चाहिए।

(+) सेनाओं और बहानों के संगठन और काम करने  
की परिस्थितियाँ ऐसी होनी चाहिए ताकि अच्छे से अच्छे  
और योग्य से योग्य आदमी इसमें जा सकें और अपना  
काम जारी रख सकें।

हमारे देश में वैज्ञानिक प्रसाधन जिनमें वैज्ञानिक  
और विज्ञान की सामग्री दोनों शामिल हैं बहुत ही  
सीमित हैं। इसलिए जरूरत इस बात की है कि हम सबसे  
महत्वपूर्ण समस्याओं पर ही अपना ध्यान केन्द्रित करें  
और उनके समाधान के लिए प्रयत्न करें। हमें इस चीज को  
बहुत ज्यादा नहीं फँसाना चाहिए। वैज्ञानिकों को मैनिफेस्टो  
से भी बहुत कुछ सीखना है क्योंकि मैनिफेस्टो के पाम सदियों  
पुराना अनुभव है रणनीति से सम्बन्धित चिन्तन है और  
सामरिक चालों का ज्ञान है।

हमें पहले दिन समस्याओं के निवारण में लगना  
चाहिए और दिन समस्याओं को प्राथमिकता देनी चाहिए—  
यह एक ऐसा विषय है जिनमें वास्तव में बहुत बठिमाई  
योग्य होती है। इसलिए समस्याओं को प्राथमिकता देने समय  
तीन बातें आमनीर पर ध्यान में रखनी चाहिए। पहली  
बात यह है कि वह समस्या भीषी सेना से सम्बन्धित हो  
और उन पर की गई सोचबीन से सेना को सीधा लाभ

पहुँचे। दूसरे बात यह है कि किसी समस्या का समा-  
 पान उपसम्पन्न साधनों के द्वारा ही सम्भव हो और अन्तिम  
 बात यह है कि समस्या का बन्धो छे जस्वी समाधान हो।  
 दिन-ब-दिन विज्ञान की प्रगति के कारण नये नये हथियार  
 बन रहे हैं और प्रगति इतनी तेज एफ़ार में हो रही है कि  
 जैस पहल बमान में कमी नहीं हुई थी। कहा जाता है  
 कि वैज्ञानिक ज्ञान हर 10 से 15 साल में दुगना हो  
 जाता है। और, हम इन तर्क को भाये नहीं बसस्ये।  
 नकिन महा दी बातें बहनी बहृत जस्यी है। पहनी बात  
 यह है कि विज्ञान की आत्यधिक उन्नति के कारण हथियारों  
 की प्रभाविया दिन-ब-दिन ज्यादा पेचीदा जाती जा रही  
 है और जा हथियार अभी 10 साल पहल इस्तीमाल किज  
 जान थे आज के पुरान बड़ गये हैं। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह  
 है कि हथियारों की इतनी ज्यादा प्रभाविया हो गयी हैं  
 कि उनमें न किसी गाम प्रणाली को अपमाना एक पेचीदा  
 काम बन गया है क्योंकि नयी प्रभावियों में ने किसी  
 विदेश प्रणाली का छाटना भारत में एक समस्या है।  
 यहाँ एक उदाहरण देना अस्तपन नहीं होना। अगर कोई  
 बैरम रिचोइज नगी नीर में मगिन हो तो उसका बजन  
 बनीब 30 हजार टन होगा। इस बजन में जातिर है कि  
 मात्र-मापान में दिगनी पेचीदपी और बुडि हुई है।  
 थी एक एक विजिगर में अपनी एक बुल्लन "भूखीपर

बैसाख एन्ड पीरल पीमिसी" (अणु अस्त्र और विरोध नीति) में लिखा है 'अगर हम अमरीका से मध्य पूर्व को एक द्विबीजक से जाना चाहें तो अमरीका की पूरी वायु सेना और रिजर्व बड़े के 30 दिन की सेवाओं की बकरल होगी और यह भी काम 30 दिन में तभी सम्भव होगा बसते कि सभी परिवहन यूनियट्स टोक काम कर रही हों और उन्हे किसी हमरे काम पर न समाया जाय ।' किसी द्विबीजक के एन्टरप्राइज के लिए हर महीने करीब 10 हजार टन मर्चार्ड की बकरल होगी है ।

### विभिन्न दास्त्र प्रणाली

अब हम यही विभिन्न दास्त्र प्रणालियों के बारे में कुछ बर्ना करेंगे । अमरीकी युद्ध अनुसंधान बीजानिकों में आत्यधिक प्रसिद्ध बीजानिक एक्सिम योजनन में लिखा है "पहले जमान में जो दास्त्र प्रणालियां प्रचलित थीं वह बहुत मन्त्र समय तक चलती रहीं थी क्योंकि विज्ञान की गति बहुत धीमी थी और एक ही तरह के हथियार बहुत सालों तक चलते रहे । एक हजार ई० तक तो एक ही तरह के अस्त्र-दास्त्र करीब 400 साल की अवधि तक चलते रहे । मन् 1500 से लेकर उन्नीसवीं-बीसवीं एकाब्दी तक भी अस्त्र प्रणालियां करीब करीब 50-50 साल तक चलती रहीं । लेकिन आज जो अस्त्र-दास्त्र प्रणालियां



बामा सर्वा एक प्रतिष्ठत न होकर राष्ट्रीय आय का 0। प्रतिष्ठत है। जिन देशों की प्रति व्यक्ति आय अमेरिका की प्रति व्यक्ति आय से 100 का हिस्सा है वहाँ अनुसंधान पर होने वाला सर्वा 0। प्रतिष्ठत है। उदाहरण के लिए अमेरिका का प्रतिरस्ता अनुसंधान और विकास पर होने वाला सर्वा प्रति वर्ष 11% करके आता है और हर साल इस सर्वा में 5 से 10 प्रतिष्ठत तक बढ़ती होती है (इस प्रकार प्रति वर्ष पिछले वर्ष की अपेक्षा 100 करोड़ रुपय में ज्यादा सर्वा बढ़ जाता है।) ब्रिटेन में प्रतिरस्ता में अनुसंधान पर हाल वाला सर्वा प्रति वर्ष 20 करोड़ पीठ है। इस सम्बन्ध में एक विमर्शना बात यह है कि ब्रिटेन में की उन्नत का जीवन सर्वा 2000 पीठ सामाना में ज्यादा है और कुछ ही भागों में इसके 5000 पीठ होने की सम्भावना है। यह सर्वा में से अमरीका इसमें तीन गुना है। इस सर्वा में से अधिकांश आय अनुसंधान के मापुनिरीक्षण पर खर्च होता है। एक विमर्शना बात यह है कि इन देशों में प्रति (अनुसंधान) व्यय पर होने वाला सर्वा करीब-करीब उगता ही है जो कि एक वैश्विक पर। हमारे देश में हर उन्नत उन्नत वाला सर्वा ब्रिटेन का एक चौथाई है और यह सर्वा हमारे देश के वैश्विक के प्रतिष्ठत माने के अनुसार पर ही होता है। मात्र-मापान पर होने वाला

कर्षा तो बहुत ही कम होता है। इसलिए हमारे देश के लिए यह और भी ज्यादा जरूरी हो जाना है कि साम सामान पर होने वाला कर्ष का पूरा-पूरा साम उठाया जाय। यह बात बिल्कुल साफ है कि प्रतिरक्षा भ यदि बरबसत किफायतसारी करनी है तो वह केवल प्रतिरक्षा अनुसंधान द्वारा ही संभव है।

ब्रिटेन जैसे देशों में प्रतिरक्षा पर होने वाले कुछ कर्षों का इसका हिसाब बिकस और अनुसंधान पर लक्ष्य होता है। यों तो अनुसंधान के बजटों को देखने से ऐसा मान्य होता है कि इस क्षेत्र में कोई ज्यादा उपसम्पिया नहीं हुई लेकिन इस बात का जरूर सचूत मिलता है कि अनुसंधान के फिलान जोर धोर से प्रमत्त हो रहे हैं। जहाँ तक हमारे देश का सवाल है प्रतिरक्षा बजट के 10 प्रतिशत को अनुसंधान पर कर्ष करण का सवाल ही नहीं उठता क्योंकि हमारे देश की आर्थिक स्थिति इसकी बच्ची नहीं है। हां इस बात की आवश्यकता ता है ही कि हम प्रयत्नों में तनिम भी बिस्मार्क न छोड़ें जोर-शोर से अपनी कोशिशों में लग जाएं और यह सभी आशा की जा सकती है कि प्रतिरक्षा भव्य ब्यवस्था पर अनुसंधान का स्वस्थ प्रभाव पड़ेगा। यह बात याद रखने योग्य है कि प्रतिरक्षा अनुसंधान में देश में ब्यावहारिक अनुसंधान को प्रोत्साहन और बस मिलता है। प्रतिरक्षा में बहुत सारे ऐसे काम

बाला सर्वा एक प्रतिष्ठित न होकर राष्ट्रीय आय का 0.1 प्रतिशत है। ग्रिन देशों की प्रति व्यक्ति आय अमेरिका की प्रति व्यक्ति आय से 100 का हिस्सा है वहाँ अनुमान पर होने बाला सर्वा 0.1 प्रतिशत है। उदाहरण के लिए अमेरिका का प्रतिरक्षा अनुमान और विकास पर होने बाला सर्वा प्रति वर्ष तीन अरब डालर है और हर घण्टा इस वर्ष से 1 से 10 प्रतिशत तक बढ़ती होगी है (इस प्रकार प्रति वर्ष पिछले वर्ष की अपेक्षा 10 करोड़ रुपय में ज्यादा सर्वा बढ़ जाता है।) ब्रिटेन में प्रतिरक्षा में अनुमान पर होने बाला सर्वा प्रति वर्ष 20 करोड़ पौंड है। इन सम्बन्ध में एक विश्लेषण बात यह है कि ब्रिटेन में भी अमान का औसत सर्वा 2000 पौंड बालाना में ज्यादा है और कुछ ही मामलों में इसके 3000 पौंड होने की सम्भावना है। यह सर्वा से रा अमेरिका में इससे तीन गुना है। इस वर्ष से से अधिकांश भाग मात्र-मात्रा में आधुनिकीकरण पर गज होता है। एक विश्लेषण बात यह है कि इन देशों में प्रति (अनुमान) औद्योगिक पर होने बाला सर्वा करोड़-वर्गीय उतना ही है जितना कि एक तीर्थ पर। हमारे देश में हर अमान पर होने बाला सर्वा ब्रिटेन का एक चौथाई है और यह सब सर्वा हमारे वहाँ के औद्योगिक के प्रतिष्ठान माने केन और बढ़ते पर ही होगा है। मात्र-मात्रा पर होने बाला

लक्षों तो बहुत ही कम होता है। इसलिए हमारे देश के लिए यह और भी ज्यादा जरूरी हो जाता है कि छात्र सामान पर होने वाले लक्षों का पूरा-पूरा भाम उठवाया जाय। यह बात बिलकुल साफ है कि प्रतिरक्षा में यदि दरबसम किफायतकारी करनी है तो वह केवल प्रतिरक्षा अनुसंधान द्वारा ही संभव है।

ब्रिटेन जैसे देशों में प्रतिरक्षा पर होने वाले काम कुल लक्षों का दसवा हिस्सा बिकाय और अनुसंधान पर लक्ष होता है। या तो अनुसंधान के बजटों को देखने से ऐसा मामूम होता है कि इन क्षेत्र में कोई ज्यादा उपलब्धियां नहीं हुई लेकिन इस बात का जरूर सहूल मिलता है कि अनुसंधान के बिलत जोर धोर से प्रयत्न हो रहे हैं। जहाँ तक हमारे देश का सामान है प्रतिरक्षा बजट के 10 प्रतिशत को अनुसंधान पर लक्ष करने का सामान ही नहीं उठवा सकता क्योंकि हमारे देश की आर्थिक स्थिति इतनी अच्छी नहीं है। हा इन बात की आवश्यकता तो है ही कि हम प्रयत्नों में तनिक भी झिंझार न छोड़ें जोर-धोर से अपनी कोशिशों में लग जायें और यह सभी जाणा की जा सकती है कि प्रतिरक्षा अर्थ व्यवस्था पर अनुसंधान का स्वस्थ प्रभाव पड़ेगा। यह बात याद रखने योग्य है कि प्रतिरक्षा अनुसंधान में देश में व्यावहारिक अनुसंधान को प्रोत्साहन और बल मिलता है। प्रतिरक्षा में बहुत सारे ऐसे काम

बासा सर्चा एक प्रतिष्ठित न होकर राष्ट्रीय आय का 0.1 प्रतिशत है। निम्न देशों की प्रति व्यक्ति आय अमेरिका की प्रति व्यक्ति आय से 100 का हिस्सा है वहाँ अनुसंधान पर हान बासा सर्चा 0.1 प्रतिशत है। उदाहरण के लिए अमेरिका का प्रतिरक्षा अनुसंधान और विकास पर होने बासा सर्चा प्रति वर्ष तीन अरब डॉलर है और हर साल इस वर्ष में 5 से 10 प्रतिशत तक बढ़ोतरी होती है (इस प्रकार प्रति वर्ष पिछले वर्ष की अपेक्षा 100 करोड़ रुपये से ज्यादा सर्चा बढ जाता है।) ब्रिटेन में प्रतिरक्षा में अनुसंधान पर होने बासा सर्चा प्रति वर्ष 20 करोड़ पौंड है। इस सम्बन्ध में एक विमर्शवादी बात यह है कि ब्रिटेन में ही अबान का औसत सर्चा 2000 पौंड मासिक के ज्यादा है और कुछ ही मामलों में इनके 3000 पौंड होने की सम्भावना है। यह सर्चा सं. रा. अनुरोधों में इनमें तीव्र पुनः है। इन वर्षों में स. अफ्रीका का आय मात्र-अग्रता के आधुनिकीकरण पर वर्ष होता है। एक विमर्शवादी बात यह है कि इन देशों में प्रति (अनुसंधान) वैज्ञानिक पर होने बासा सर्चा करोड़-वर्षीय जगता ही है जिनका कि एक सैनिक पर। हमारे देश में हर अबान पर हमने बासा सर्चा ब्रिटेन का एक चौपाई है और यह सब सर्चा हमारे यहाँ के सैनिक के प्रतिष्ठित मान बैठन और बर्तने पर ही होता है। मात्र-मासिक पर हमने बासा

वर्षा तो बहुत ही कम होता है। इसलिये हमारे देश के लिए यह और भी ज्यादा जरूरी हो जाता है कि साज सामान पर होने वाले खर्चों का पूरा-पूरा साम जटाया जाय। यह बात विद्यमान साफ है कि प्रतिरक्षा में यदि बरबसल किफायतकारी करमी है तो वह केवल प्रतिरक्षा अनुसंधान हाथ ही समय है।

ब्रिटेन जैसे देशों में प्रतिरक्षा पर होने वाला कुल खर्च का बसबां हिस्सा बिक्रास और अनुसंधान पर खर्च होता है। जो तो अनुसंधान के बजटों को देखने से ऐसा मामूम होता है कि इस क्षेत्र में कोई ज्यादा उपसम्पियां नहीं हुई लेकिन इस बात का खबर बहुत मिसठा है कि अनुसंधान के कितने जोर शोर से प्रयत्न हो रहे हैं। जहां तक हमारे देश का ख्यास है प्रतिरक्षा बजट के 10 प्रतिशत को अनुसंधान पर खर्च करने का ख्यास ही मही उठता क्योंकि हमारे देश की आर्थिक स्थिति इतनी बख्शी नहीं है। हां इस बात की आवश्यकता तो है ही कि हम प्रयत्नों में तनिक भी हिमाई न छोड़ें जोर-शोर से अपनी कोशिशों में लग जाएं और यह तभी जाया की जा सक्तौ है कि प्रतिरक्षा खर्च व्यवस्था पर अनुसंधान का स्वल्प प्रभाव पड़ेगा। यह बात याद रखने योग्य है कि प्रतिरक्षा अनुसंधान से देश में व्यावहारिक अनुसंधान को प्रारंभान और बल मिसठा है। प्रतिरक्षा में बहुत सारे ऐसे काम

बासा तर्चा एक प्रतिघट न होकर राष्ट्रीय भाव का 0। प्रतिघट है। जिन देशों की प्रति व्यक्ति आय अमेरिका की प्रति व्यक्ति आय से 100 का हिस्सा है वहाँ अनुसंधान पर होने वाला तर्चा 0। प्रतिघट है। उदाहरण के लिए अमेरिका का प्रतिव्यक्ति अनुसंधान और विकास पर होने वाला तर्चा प्रति वर्ष तीन अरब डॉलर है और हर साल इन वर्षों में 5 से 10 प्रतिघट तक बढ़ोतरी होती है (इस प्रकार प्रति वर्ष पिछले वर्ष की अपेक्षा 100 करोड़ रुपये से ज्यादा तर्चा बढ़ जाता है।) ब्रिटेन में प्रतिव्यक्ति अनुसंधान पर होने वाला तर्चा प्रति वर्ष 20 करोड़ पौंड है। इन सम्बन्ध में एक विमर्शक बात यह है कि ब्रिटेन में जो खर्च का औसत तर्चा 2000 पौंड मानना से ज्यादा है और कुछ ही वर्षों में हमारे 3000 पौंड होने की सम्भावना है। यह तर्चा सं० रा० अमेरिका में हमारे तीन गुना है। इन वर्षों में से अधिकांश भाग मात्र-मात्रा के आनुनिर्धीकरण पर तर्चा होता है। एक विमर्शक बात यह है कि हम देशों में प्रति (अनुसंधान) वैज्ञानिक पर होने वाला तर्चा करोड़-करोड़ उनका ही है जितना कि एक सैनिक पर। हमारे देश में हर खर्च पर होने वाला तर्चा ब्रिटेन का एक चौथाई है और यह सब तर्चा हमारे यहां के सैनिक के प्रतिघट माने बैलन और बढ़ते पर ही होता है। मात्र-मात्रा पर होने वाला

वर्षा तो बहुत ही कम होता है। इसलिये हमारे देश के लिए यह और भी ज्यादा जरूरी हो जाता है कि साज सामान पर होने वाले सबों का पूरा-पूरा साम जटाया जाय। यह बात विसमृत्त साफ है कि प्रतिरक्षा में यदि दरबसम किफायतकारी करमी है तो वह केवल प्रतिरक्षा अनुसंधान हाथ ही संभव है।

ब्रिटेन जैसे देश में प्रतिरक्षा पर होने वाला कुल सबों का दसवां हिस्सा बिकास और अनुसंधान पर खर्च होता है। यों तो अनुसंधान के बजटों को देखने से ऐसा मामूम होता है कि इस क्षेत्र में कोई ज्यादा उपसम्भिया नहीं हुई लेकिन इस बात का जरूर बहुत निमतता है कि अनुसंधान के बितने जोर शोर से प्रयत्न हो रहे हैं। जहां तक हमारे देश का संबंध है प्रतिरक्षा बजट के 10 प्रतिशत को अनुसंधान पर खर्च करने का सवाल ही नहीं उठता क्योंकि हमारे देश की आर्थिक स्थिति इतनी अच्छी नहीं है। हां इस बात की आवश्यकता तो है ही कि हम प्रयत्नों में तनिक भी ढिग्राई न छोड़ें और-धोर स अपनी कोशिशों में लग जाएं और यह तमी आया भी जा सकता है कि प्रतिरक्षा अब व्यवस्था पर अनुसंधान का स्वस्व प्रभाव पड़ेगा। यह बात याद रखने बोध्य है कि प्रतिरक्षा अनुसंधान में देश में व्यावहारिक अनुसंधान को प्रोत्साहन और बल मिलता है। प्रतिरक्षा में बहुत सारे ऐसे काम



हाते हैं जिसका इस्तेमाल असीनिक कार्यों में फिट्टी व  
 बिभी रूप में होता रहता है और इसी तरह असीनिक क्षेत्र  
 में होने वाले अनुसंधानों का सैनिक क्षेत्र में इस्तेमाल होता  
 रहा है। इनसिये प्रयोगात्मक इमेफ्टानिफ़्ट तथा रकार  
 और विमानन पर विशेष महत्व स्थापित किए गए  
 मन ही वे बहुत छोटे पैमाने पर हों। प्रयोगशालाओं का  
 बड़ा बनाना होना और वैज्ञानिक कमचारियों की संख्या  
 बढ़ानी होगी। पर इनके बनने से भी अब तक कोई फ़ायदा  
 नहीं होगा जब तक कि प्रयोगशालाओं में इस प्रकार का  
 बलाबलक पैदा नहीं हुआ जिससे अनुसंधान को प्रस्था  
 पिते और अब तक कि ये प्रयोगशालाएँ वैज्ञानिक काम  
 के लिए 'अतिमान ल्याम और उद्योग के ज्ञान मन्दिर'  
 में बनें।

## आणविक संरचना

अणु में परमाणु के अणु की मदद से बनी और अणु  
 पूर्ण अणु का उल्लेख करना आवश्यक है और यह  
 अणु है आणविक संरचना की। अणु के अणुओं में  
 परमाणु एक ही बिनागवारी और महा विच्छिन्न अणु  
 का आणविक अणु है जिसका प्रभाव अणुओं की भी  
 परमाणु है। अणुओं के अणुओं में अणुओं का  
 अणु और प्रभाव अणु अणु पर निर्भर करता है कि

उसके पास कितनी दूर तक मार करने वाले बिष्मसक  
हथियार हैं और अब तो ऐसे-ऐसे बिष्मसक हथियार बम  
गये हैं कि उनकी मार का दोष सारी दुनिया ही बन गई  
है। इसका स्पष्ट उदाहरण स्पुतनिक है।

इन बातों से हम एक ही परिणाम पर पहुँचने हैं और  
बाइस्टीन के सम्बन्धों को सोहराना चाहते हैं—“या तो  
सारी दुनिया एक हो या फिर दुनिया खड़े ही न।” आज  
के मेगाटम बाल विद्यालय प्रक्षेपणास्त्र और मानव सम्मता  
का बहुत समय तक सहजस्तित्व नहीं रह सकता।

होमरे प्रतिष्ठा विनाश कार्यक्रम के अन्त  
पर दिने गये अस्त्र का कथम्पर।

लेकिन जब राजनीति विज्ञान में या बिमान राजनीति की सीमाओं में प्रवेश करता है तो निश्चय ही उनका रूप बिगड़ जाता है ।

## औसत छात्र की प्रतिभा बढ़े

हमारे सामने और बिचैपकर वर्तमान संघट को देखना हुए विद्या के क्षेत्र में सबसे बड़ी और भ्रूणमृत समस्या बिना पर सम्पूर्ण बिकास आधागित है वह है कि हमारे बिद्याबिद्या और मिधा के स्तर को किस तरह ऊँचा उठवाया जाय कि जिसमे औसत छात्र की प्रतिभा ऊँची उठे और बिपर में अधिक समस्या में छात्र उत्तीर्ण हा । आज केज होने बामे बिद्याबिद्या की बला यह है कि 1960 में केज न को बरीभावें हुए थी उनम बी०ए की परीलाओं में प्रवेश होने बामे बिद्याबिधी का 57 प्रतिगत बी० काम० व 508 प्रतिगत बी० एम०सी० व 43 प्रतिगत बी० एम०सी० (इजी०) व 311 प्रतिगत बी० एम०सी० (एसी ) व 222 प्रतिगत बी० एम०सी० (बीटी०) में 316 प्रतिगत बी० एम०सी० (टीकनी०)में 137 प्रतिगत और एम बी० बी० एम० व 406 प्रतिगत केज हुए व । एम बी एम ए० में 231 एम० एम०सी० व 21 । और एम काम० में 109 प्रतिगत बिद्यार्थी केज हुए । हमने आदिर है कि आज बालों के अनिनिता

हमारी शिक्षा प्रणालि में नहीं न कहीं कोई बुनियादी दोष है। आइये अब इन्हीं परीक्षानों की तुलना इंग्लैण्ड से करें। अक्टूबर 1957 में वहाँ जितने विद्यार्थी स्नातक पाठ्यक्रम (विषी कीर्स) में प्रवेश हुए उनमें 85.8 प्रतिशत परीक्षानों में सफल हुए। इनमें 76.8 प्रतिशत ने एक बार में ही परीक्षा पास करली और भी 14.2 प्रतिशत विद्यार्थी दूसरे हुए वे उनमें से 11.8 प्रतिशत विद्यार्थी वास्तव में अनुत्तीर्ण नहीं हुए वे बरह उन्होंने बीच में ही इस पढ़ाई को छोड़कर कोई दूसरा पाठ्यक्रम में लिया था, या किसी शिक्षण संस्था में कम या अधिक और 0.1 प्रतिशत छात्रों की अनुशासनात्मक कार्यवाही के कारण परीक्षा छोड़नी पड़ी थी (पर इन विद्यार्थियों में से छे बिनके पास औपचि विज्ञान इत विज्ञान और पशुपालन विज्ञान का उनमें से 29.9 प्रतिशत को उत्तीर्ण होने के लिए एक से अधिक बार परीक्षा लेनी पड़ी।)

इस तरह हम देखते हैं कि अब तक अनुत्तीर्ण छात्रों की समस्या को उचित ढंग से हम नहीं किया जायेगा तक तक विशेष रूप से विज्ञान की कक्षाओं में प्रवेश पाने वाले विद्यार्थियों की संख्या उत्तीर्ण होने वाले विद्यार्थियों की तुलना में बढ़ती ही जायेगी। इस तरह विज्ञान की शिक्षा पर मिठना तक होना तुलनात्मक दृष्टि से हमसे उठना साम नहीं होगा। यह एक वैज्ञानिक तथ्य है कि

उत्तीर्ण होने वाले स्नातकों की संख्या जिसका पश्चिमी की  
 क्षमता और प्रवेश पाने वाले विद्यार्थियों का पुनर्गठन  
 होती है। जिसका पश्चिमी में सुधार करके अच्छी और  
 सस्ती पाठ्य पुस्तकें तैयार करें—जो सभी विद्यार्थियों को  
 उपलब्ध हो सके। छुट्टियों को कम करके जिसका कार्यकाय  
 बढ़ाकर, और जिसका और विद्यार्थियों के परस्पर सम्पर्क  
 को और अधिक बलिष्ठ बनाकर आज के हीन वाले  
 विद्यार्थियों की समस्या को काफी हद तक कम करना संभव  
 है। इसके लिए हम तुरन्त ही कुछ विशेष और प्रभावपूर्ण  
 कदम उठाने होंगे। अच्छे शिक्षकों का अधिकार में  
 रचना होगा। अच्छी और उच्च शिक्षण की पाठ्य पुस्तकों  
 को मसाले दायों में उपलब्ध कराना होगा। पुस्तकालयों में  
 पुस्तकों की और बैठने की ठीकी व्यवस्था करनी होगी  
 जिसका प्रवेश विद्यार्थी को उनका इस्तेमाल करने का  
 गमान अधिकार मिल सके। जिसका नर्सवार्डों के आगपास  
 ऐसे अध्ययनकेंद्र बनाए होंगे जिनमें छात्रावासों में न रहने  
 वाले स्थानीय विद्यार्थियों को भी दिन में रहने के लिए  
 आवश्यक बालाशरण उपलब्ध हो सके और इसी तरह के  
 ऐसे अनेक कदम उठाने होंगे जिनसे विद्यार्थियों की अध्य-  
 यन क्षमता और अधिक बढ़ सके। यदि ये कदम उठा  
 जाएंगे तो न केवल कम होने वाले छात्रों की समस्या  
 न बनी होगी बल्कि विद्यार्थियों का वैश्व स्तर भी उंचा

होना और विश्वविद्यालयों का सामान्य वातावरण भी  
बच्छा बन जायेगा।

केस होने का कारण

हमारे देश में माटी संख्या में विद्यालयों के केस होने  
के अनेक बहाने कारण हैं किन्तु उनमें से एक सबसे बड़ा  
कारण यह है कि हमारे देश के अधिकांश विद्यालयों को  
घर पर पढ़ने के लिए आवश्यक वातावरण उपलब्ध नहीं  
होता। उनमें से अनेक को पढ़ने के लिए घर में ऐसा स्थान भी  
नहीं मिल पाता है जहाँ पर वे एकाग्रचित होकर अपनी पढ़ाई  
कर सकें। साथ ही उन्हें सर्वत्र बरेलु कठिनाइयाँ विद्यमान  
हैं और आर्थिक समस्याएँ घेरे खड़ी हैं। आमतौर पर उन  
को विश्वविद्यालय तक पहुँचने के लिए अपने घर से काफी  
धनसा खर्च करना पड़ता है और इन तरह उनका काफी  
समय बर्बाद हो जाता है। फिर हमारे देश के अधिकांश  
विद्यार्थी ऐसे घरों से आते हैं जिनमें सम्पन्न सम्प्रापन  
की विशेष शृष्टि नहीं खड़ी क्योंकि आज भी हमारे  
देश की जनसंख्या के 80 प्रतिशत लोगों की पारिवारिक  
आयवनी 100 रुपए प्रति माह से भी कम है। इसलिए  
छात्रावासों के अतिरिक्त यह आवश्यक है कि प्रत्येक विद्यार्थ  
नस्था के माध्यम से सम्पन्न बूढ़ बनाये जायें जिनमें घर  
से आने वाले स्थानीय विद्यार्थियों को पढ़ने का आवश्यक

बातावरण उपलब्ध हो सके और साथ ही बहूँ पर उन्हें मले कामों में भोजन मिल सके । इसके अतिरिक्त पुस्तकालयों के वाचनालयों को बढ़ाने की विशेष रूप से आवश्यकता है । साथ ही यह है कि पुस्तकालय विद्यालयों के लिए आवश्यक के लिये केन्द्र बन जाने चाहिए जिसमें पुस्तकालय भी हो सके ।

### शिक्षा सामान्य हो

वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए और हमारी विद्यार्थीवृत्तों के अर्थव्यवस्था के कारण यह आवश्यक हो गया है कि शिक्षा को जहाँ तक हो सके उद्योग बुद्धि और दूसरे कार्यों के साथ उत्पादन की दृष्टि में सम्मिलित किया जाय । इसमें न केवल शिक्षा विशेष रूप से विज्ञान और तकनीकी की शिक्षा अधिक उपयोगी बननी चरन् कुछ विद्यार्थियों के लिए यह भी सम्भव हो जायेगा कि वे अपने विद्यालयों का आर्थिक भाग स्वयं कमा सकें । इसके साथ ही सभी विद्यार्थी सरकारी ही प्रयोगशालाओं का लिये उपकरणों में सुनिश्चित होना चाहिए जो शिक्षा की दृष्टि में आवश्यक न सहायकों और उपयोगी हैं । अनीरक्षणी बड़े और छोटे संस्थानों को आपसीर पर विशेषता में ध्यान देने हैं बेकार हैं । व्यावहारिक उपयोग में आने वाले उपकरणों न उन सहाय और सम्पन्न के

लिए इन संस्थाओं में छोटे-छोटे कारखाने भी होने चाहिए जिनमें काम करके विद्यार्थी अपने खामी समय में कुछ कमा सकें ।

इस तरह विरहविद्यालय और दूसरी शिक्षण संस्थाओं को विद्यार्थकों तथा विद्यार्थिकों और मनीषियों का निवास स्थान बनाना होगा । यदि शिक्षण संस्थायें ऐसी नहीं बनती हैं तो जल्द ही वे अन्य बातों में कितनी ही ध्यानदार क्या न हों वे वास्तविक रूप से विद्या के भागार नहीं कहें जा सकत । विरहविद्यालयों का यह विद्यार्थकों को चाहिए कि वे समाज को ऐसे प्रतिभाशाली बालकों और लड़कियों को प्रदान कर सकें जो समाज के प्रतिभाशाली और औपनिवेशिक और दूसरे तैमो में प्रतिष्ठित हो और जिनमें त्याग और तपस्वी की भावना सबसे अधिक हो । विरहविद्यालय मानवता सहनशीलता, विवेक संप्रभासना और सत्यान्वेषण के प्रतीक हैं । वे अनुपम समाज को व्यवहार से प्रकाश की ओर, अज्ञान से ज्ञान की ओर व अज्ञान से ज्ञान की ओर ले जाने वाले हैं ।

**अनुसंधान — निष्ठ अध्यापक**

इसलिए विरहविद्यालयों की विशेष शक्ति इस तथ्य में निहित है कि वहाँ योग्यता, अध्यापक और अनुसंधान की भावना एक स्थान पर मिलते हैं । अतएव विरहविद्या



सर्वो में सम्पादन और अनुमोदन का प्रतिस्पर्धी नहीं बरन् सहकारी और पूरक होना चाहिए। जर्मन विश्वविद्यालयों के विद्यार्थी 100 वर्षों का अनुभव यह बताता है कि सम्पादन और अनुमोदन को साथ-साथ चलाना निश्चित रूप में लाभदायक होता है। जैसा कि सर जस्टोफ़ इन्पोस्ट न जभी हान में ( "नेचर" क 15 दिसम्बर 1962 क अंक में) कहा है यदि विज्ञान को सजीव रखना है तो उभय सम्पादन और अनुमोदन को असम नहीं किया जा सकता क्योंकि वे सबसे अच्छे अनुमोदनकर्ता होने हैं वहीं सबसे उत्तम निराक भी होने हैं और इनमें ही विद्यार्थियों को सबसे अधिक प्रेरणा मिलती है। मात्र हृदय एव ही अनुमोदन निष्पत्तिसंगतता की आवश्यकता है जो जाने वाली पीढ़ी का अपनी प्रति निर्माण कर सके।

यह इतना स्पष्ट साबित हो चुका है कि हमें यह निष्कर्ष निकालना है कि जो विज्ञान क प्रमुख विषय विद्यार्थियों को पढ़ाया जाता है उनमें सम्बन्धित कोई भी अनुमोदन सम्पादना नहीं करनी चाहिए क्योंकि इन सम्बन्धीय वैज्ञानिक परम्परा को सुदृढ़ नहीं रखा जा सकता और बहोत पर तेने प्रभाव और उन्मादक नहीं मिलेगा जो जाने वाली पीढ़ियों को उनके निर्माण काम में प्रेरणा और प्रोत्साहन दे सके।

## शिक्षा के राष्ट्रीय मान

अध्ययन के क्षेत्र विद्योप रूप से विश्वविद्यालय स्तर पर हमका शिक्षा के राष्ट्रीय मान स्थापित करने होये । इन मूस्यों का स्थापित करना चाई आसान काम नहीं क्योंकि इनका सम्बन्ध सद्विचारों से है । आब तो अनेक अविकसित देशों में भी शिक्षण संस्थाओं को ऐसी इमारतों और उपकरण दिखाई पड़ने हैं जिनकी तुलना आधुनिकतम देशों की इमारतों से की जा सकती है । इसका कारण यही है कि ऊँचे विचारों की अपेक्षा ऊँची इमारतों को बनाना अधिक आसान है, विद्योप रूप से उन देश में जब कि हमस सया बन बिना समाप्त हो नहीं से प्राप्त हो गया है ।

दिसी विश्वविद्यालय को न उसकी इमारत में उपकरण न पुस्तकालय और न उसके शिक्षक बनाने हैं । वास्तव में कोई विश्वविद्यालय उन विचारों से बनता है जिनका वहाँ सृजन होता है और जो वहाँ की मिट्टी में पनपते हैं । हमनिष् विश्वविद्यालय महान् और ऊँचे विचारों को जन्म देने बाल स्थान होने चाहिए । य ऐसे केन्द्र हान चाहिए जहाँ पर सब ऐसे लोग रहने का मातापित्त हों जो विचारों के संसार में छन हैं । जिनु विश्वविद्यालयों में ऐसी परिस्थिति का निर्माण तब तक

असम्भव है जब तक ज्ञानका नियन्त्रण और प्रयोजन ऐम  
 तापो के हाथों में है जो विचारों से इरने हैं। इसके मनुष्य  
 यह भी होने हैं कि विश्वविद्यालय म सुन्दर और पवीन  
 विचारों को प्रोत्साहन और विशेष स्थान मिलना चाहिए।

### एकता का विराट रूप

परमाणु युग और एम के विराट स्वयं-शान्ति और  
 स्वयं-निर्देशित अरवा के अमान में ज्ञान को अन्तराष्ट्रीय  
 बनाना और भी जरूरी हा गया है। क्योंकि आज परमाणु  
 विस्फोट मानव सम्पत्ता और मनुष्य जीवन को ही बुनीनी के  
 रहे हैं। एम विचारों को लीगो तर पहुँचाने म हमारी मिशन  
 गहराये बड़ी मरद बन सक्ती है। आज मानवता परमाणु  
 विस्फोट की व्यापक और लपन बाबाबाद व मूह तर  
 पहुँच चुकी है और परमाणु शक्ति के धान अथवा अन्तः  
 मन्त एम्पेसाय मे मण्डुर्क मानव धानि के विरुद्ध जाने  
 और हमारी सम्पत्ता के विपुल हीन का पुनःपुनः गहरा  
 रीता हा गया है।

एम सम्बाध में आ साधान बराने का यह बचन  
 बरत मण्डुर्क है कि अब एम अरन का धान में नरी एमना  
 चाहिए। परमाणु विस्फोट के बाह्य अबाबद निधि  
 इन्दिण रीता हा गयी है। क्योंकि वैज्ञानिक बर्तमान  
 ज्ञान और एम्पेसाय अन्तःमन्तना तथा वैज्ञानिक बुद्धि

के बीच पड़ी हुई दरार तभी से बढ़ती जा रही है जिसके कारण विज्ञान और अध्यात्म परमाणु और महिला का संतुलन बढ़बढ़ा गया है।

परमाणु बिस्फोट की इस पृष्ठभूमि में शिक्षण संस्थानों विज्ञान टेक्निकल शिक्षा समित कक्षाओं के बीच अन्ततु मग को दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभान कर सकती है। साथ ही वे ज्ञान और विवेक तथा बुद्धिमत्ता के बीच पड़ी हुई खाई को पाटन में भी अपना आधिक योग दे सकती हैं। यह तभी हो सकता है जब कि हमारी शिक्षण संस्थाएँ ऐसी बन सकें जहाँ पर प्रत्येक विद्यार्थी को विज्ञानात्मक ध्येय करने की सुविधा हो प्रत्येक विद्यार्थी को विवेक की तुला पर तोलने और अपनी छात्रा का समाधान करने की स्वतन्त्रता हो जहाँ पर ज्ञान विवेक और नस्ल-प्रीतिता एक ही कुल की छात्राएँ हों और जहाँ पर न केवल विद्वत्ता विद्यार्थीत्व और चारित्र्य का सम्मान दिया जाता हो बल्कि जहाँ इन गुणों को विकसित करने की व्यवस्था भी हो।

वर्तमान संकट के इस समय में आज राष्ट्र का पहले में भी अधिक गेस प्रतिभावाण और शान्त व्यक्तियों की बढ़ी से बढ़ी संख्या में आवश्यकता है जो विभिन्न विषयों में विद्यय रूप में विज्ञान टेक्नोलीजी और औद्योगिक विज्ञान में प्रशिक्षण प्राप्त हो। यह हमारे देश के सभी कक्षाओं

और बिदेसविद्यालयों के लिए एक बुनीटी है और इसका  
 मुकाबला हम तभी कर सकते हैं जब अगातार पम्पौरणा  
 पूर्वन कठोर धम किया जाय । विद्यार्थियों की समता को  
 केना उद्योग नाम और अनुत्तीर्ण होने नाम विद्यार्थियों की  
 सुझा को कम किया जाय । यदि हमारे विद्यार्थी शिक्षक  
 और शिक्षण सुझावे ऐसा कर सकती है तो य आज की  
 बिष्ट परिस्थिति में देश की उक्ति और नमृष्टि को  
 बढ़ाने में प्रत्यक्ष योग दे सकती है ।



## मानव और परमाणु विस्फोट

‘हम आप के सामने वर्तमान युग की सबसे उत्तमन मरी  
 उच्च समस्या को पेश करते हैं जो दुर्दमनीय भयानक  
 और अनिवार्य है और जिससे बचा नहीं जा सकता ।  
 प्रश्न यह है कि क्या हम सदा के लिए युद्ध बन्द करण  
 की घोषणा कर सकते हैं या हम मनुष्य जाति को समुत्त  
 नष्ट करना चाहते हैं ? यदि हम सदा के लिए युद्ध से  
 विमुक्त हो जाते हैं तो हम एक ऐसा समाज निर्माण कर  
 सकते हैं जिसमें आनन्द काम और बुद्धि की सतत प्रगति  
 हो सकती है । तो क्या हम इस स्वर्गीय आनन्द के बरसे  
 विनाशक कृत्य को इसलिए चाहते हैं, क्योंकि हम अपने  
 भयङ्गे समाप्त नहीं कर सकते । हम आपसे मनुष्य होने  
 के भाँते मनुष्यता के नाम पर यह निवर्तन करते हैं कि आप  
 सब कुछ भूल कर केवल अपनी मानवता को याद रखें ।  
 यदि आप यह कर सकते हैं तो निश्चय ही मये स्वयं क  
 लिए रास्ता खुला है । किन्तु यदि आपको यह संकूर नहीं  
 है तो आप के सामने मानव मात्र की मृत्यु का संकट  
 उपस्थित है ।’

अमृतमन के कारणों की लोज करके उस को ताम करना मनिबाम हो गया है । क्योंकि जिस तेजी से संसार के बड़े राष्ट्रों में परमाणु बलों की होड़ बढ़ रही है यदि इन की गति इतनी ही रही ता मनुष्य जाति के किनष्ट हान का निश्चय गतरा है । यह होड़ 16 जुलाई 1945 को अमरीका द्वारा प्रथम परमाणु बिस्फोट के पटीक्षण में शुरू हुई थी । 6 तथा 9 अगस्त 1945 को अमरीका द्वारा जपान के हिरोशिमा और नागसाकी नगरों पर भी परमाणु बम्ब छोड़े गए थे उस में परमाणु में निहित एलिस के जिन बिस्फोट रूप का दर्शन हुआ उसके कारण ही कम में भी हम क्षत्र में प्रवेश किया और 29 अगस्त 1945 को जपान अपना जपान परमाणु बिस्फोट दिया । कम और अमरीका की हम हाड़ में बिस्फोट भी पीछे नहीं रहना चाहता था इसलिए जपाने भी अक्टूबर, 1952 में अपना पहला परमाणु बिस्फोट दिया और फिर इसी कम में जाग में करबटी 1960 में अपना परमाणु बम्ब का पटीक्षण दिया ।

यह हाड़ केवल परमाणु बम्ब तक ही सीमित नहीं है बल्कि तीन बड़े राष्ट्रों में हाइड्रोजन बम्ब की से कर उसमें भी अजानत होड़ गम गई । अमरीका ने नवम्बर, 1952 में हम ने अगस्त 1953 में और इंग्लैंड ने सिते, 1957 में हाइड्रोजन बम्ब का प्रथम पटीक्षण दिया ।

इस बीच में एक अच्छी बात यह हुई कि अक्टूबर 1938 से अगस्त 1961 तक स्वेच्छा से अमरीका और रूस ने परमाणु अस्त्रों का परीक्षण बन्द कर दिया। किन्तु सितम्बर-नवम्बर 1961 में रूस ने अपने परीक्षण फिर शुरू कर दिए। 30 अक्टूबर 1961 को संसार का सबसे बड़ा परमाणु बिस्फोट हुआ। यह सायब लगभग 100 मीगाटन का था किन्तु इसको 60 मीगाटन का ही बताया गया था। इसके प्रतिभिया स्वल्प अमरीका ने 25 अप्रैल 1962 से अपने परमाणु बिस्फोट फिर शुरू किए जिनमें कसीन बम्ब (जिनके बिस्फोट होने के बाद वातावरण में कोई कुछ प्रभाव नहीं रह जाता) और न्यूट्रोन बम्ब भी शामिल हैं।

### परमाणु बिस्फोट की भयानक शक्ति

परमाणु बिस्फोट की भयानक शक्ति का कुछ अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि एक मीगाटन से अधिक के परमाणु बिस्फोट (जैसा कि अमरीका ने जपान माच 1951 के परीक्षण में और रूस ने नवम्बर, 1956 में इस्तेमाल किए थे) ने इसी बिस्फोटक शक्ति मुक्त होती है जितनी आज तक के इतिहास में छोड़े गए कुछ बिस्फोटों से पैदा हुई है। इसमें तृतीय महायुद्ध में हुए बिस्फोट भी शामिल हैं। यदि एक मीगाटन पारित के



परमाणु बम्ब से मुक्त शक्ति को टी एन० टी० या बाबर जैसे रसायनिक विस्फोटकों से प्राप्त किया जाने लगे इन विस्फोट पदार्थों का मूल्य ही केवल 2000-3000 करोड़ रुपय होगा। इसमें विस्फोट का माने से जाने का लक्ष्य शामिल नहीं किया गया है। इन विस्फोट पदार्थों की मात्रा का एक अन्दाजा इस बात से भी मनाया जा सकता है कि एक मैग्नेट बम्ब की विस्फोट शक्ति के तुल्यार्थ बाबर या टी एन टी० को यदि मासवादी के दिग्दर्शक में भगा जाय तो इन विस्फोट पदार्थों की कुल मात्रा इतनी अधिक होगी कि इस सब को एक मासवादी में भरने के लिए इतने दिग्दर्शकों की आवश्यक पड़ेगी कि यदि इन दिग्दर्शकों को एक क बार एक लगाया जाय तो उनकी सम्पदा इतनी होगी जिनकी बरतार से बंगालुधारी तक की है। फिर इन रसायनिक विस्फोटकों की तुलना में परमाणु विस्फोटकों को बनाने में लागत कम लगती है। उदाहरण के लिए एक हाइड्रोजन बम्ब की सीमित केवल कुछ करोड़ रुपय ही आती है। इसका कारण यह है कि इन बम्बों को बनाने के लिए अब लगी विविधा विरगिन का लो लगी है जिनमें मेंहगे यूरेनियम 235 के स्थान पर लगे यूरेनियम 233 का इस्तेमाल किया जाता है।

नकार ही यह है कि परमाणु शक्ति के इस विस्फोटक को बनाना इसको बनाने वाले देश तक नहीं कर

मक से बैसा कि 1956 में प्रकाशित श्री टूमेन के सम्म-  
रणों में पता चलता है। व समा कहते हैं कि 1943 में  
एक ऐसी अद्भुत घटना घटी जो निरन्तर विश्व में श्रेष्ठ  
संसार के साथ हमारे सम्बन्धों में जाति पदा करने वाली  
थी और जिसके कारण मनुष्य जाति एक ऐसे युग में पदा-  
रंज करने वाली जो जिसके परिणाम और जिससे पदा  
होने वाली समस्याओं की हम सम्पना भी नहीं कर सकते।  
यह अद्भुत घटना परमाणु बम्ब था।

इसी प्रकार श्री किशोर अपनी पुस्तक "ग्लोबोसल  
जाम्स एण्ड थैरन पोलिटी" (परमाणु बम्ब और बिदेस  
नीति) में प्रथम कसो परमाणु बिस्फोट परीक्षण की बर्षा  
करते हुए कहते हैं 'अन्तर्राष्ट्रीय गुटों की राजनीतिक  
गति सम्बन्ध पर जो प्रभाव कस द्वारा परमाणु बम्ब  
बनाव की सम्पत्ता का पदा है उदाहरण कारण परमाणु  
बम्बों के धन में हमारा एकाधिकार गतम हा गया है।  
यदि कस द्वारा सम्पूर्ण पश्चिमी यूरोप को कस में कर  
निमा जाता हा भी गति सम्बन्ध को दृष्टि में हमारी  
उपनी हानि न होनी।'

### बिनाग का ताण्डव मूच

जिउने कुछ बर्षों में इस बिगट गति के हान शान  
बिनाग के अनुमान लगाने ल्य है किन्तु केवल एक हा-क-

बन बम्ब ही विनाश का इतना विपट ताण्डव उपस्थित करता है कि इसके द्वारा होने वाली मृत्यु संख्या को बाघानी से सिपाने के लिए हमें अब अपने विनये की इकाई ही सुमरी बनानी पड़ी है। इस इकाई को मैसा-ईब कहने हैं जो 10 लाख मृत्यों के बराबर होती है। परमाणु बम्ब में केवल 10 बर्बमीस धन का ही सम्पूर्ण विनाश होना था किन्तु हाइड्रोजन बम्ब में निरन्ती केवल आठ और सप्ते ही एक हजार बर्बमीस दोष का नष्ट कर देती है। इसके अतिरिक्त 10 हजार बर्बमीस का दोष इसके निरन्ते विभिन्न पराशों द्वारा नष्ट हो जाता है। इस लिये एक हाइड्रोजन बम्ब में निरन्ती केवल सप्ते और गर्मी ही नष्ट कर दे दे के नगर का नष्ट करने के लिए काफी है।

उदाहरण के लिए परमाणु युद्ध में अमेरिका का मैसा विप्लव ताण्डव होना हमना भी कुछ अनुमान लगाया गया है। उदाहरण के लिए यदि 10 हजार मैसाटन के परमाणु बम्बों के अमरीका पर हमला किया जाये तो उसकी पूर्ण जनसंख्या का केवल दसवां भाग ही जीवित रह सकेगा जब 90 प्रतिशत भाग जायगा। हमरा यह है कि हम अनुमान में उन मृत्यों की गिनती नहीं की है जो परमाणु विस्फोटों के वंश हुए सुन्दरे बालों के हामी।

अविष्य में परमाणु युद्ध की सीमात्म सीमा केवल युद्ध में रत देशों तक ही सीमित नहीं रहेगी बल्कि इसके संहारकारी प्रभावों से तटस्थ देश भी नहीं बच सकेंगे। परमाणु बलों से युक्त ऐक्यो सक्रिय परार्थ और विकिरण तटस्थ देशों के शाशासन में भी घुस निज प्रायेण जिसके कारण बिना सड़े ही उनकी जनसंख्या का 5 से 10 प्रतिशत मात्र नष्ट हो जायेगा।

इन अनुमानों की पुष्टि अमरीकी सैन्य अनुसन्धान और विकास विभाग के प्रमुख सैस्टीनैट जनरल बेन्स रैबिन के उस बयान से भी हो जाती है जो उन्होंने मई 1956 में अमरीका के मिनेट क विप्लवजन कमेटी के सामने दिया था।

जब सैस्टीनैट जनरल रैबिन से मिनेटर इक ने पूछा 'क्या आप कृपा करके मुझे यह बता सकेंगे कि यदि हमें परमाणु युद्ध में शामिल होना पड़े और यदि परमाणु बलों से सुसज्जित हमारे वायुसेना क्ल पर हमला कर देता जायक विचार में इन परिस्थितियों में मृत्यु आदि के रूप में कम की कितनी हानि होगी ?'

जनरल रैबिन ने इसका उत्तर देते हुए कहा था "सौबूदा अनुभवों के अनुसार हम हमारे के कारण निज या आप दोनों वर्गों की ही अपार हानि हो सकती है। यह एक बात पर निर्भर करता है कि क्या का रत उस समय

दिन बार को होगा। यदि हमने के समय हवा की दिशा दक्षिण पूर्व हुई तो इन घुवनों में से अधिकतर कम के अरको नाभरिक मृन्धु का विकार बन जायेंगे। यद्यपि वायान और बहो तक कि प्रिसिपाइन क्षेत्र तक पर भी इसका सहारक प्रभाव पड़ेगा। किन्तु यदि वायु इसके विपरीत दिशा में बहती है तो पश्चिमी योरोप के अरको नाभरिक हम हमने का विकार होंगे।

### घनघोर रूप से भयानक सड़ाई

गनी घनघोर रूप में भयानक सड़ाई के लिए काम होता बिपरीत तैयारिया में रह है और अनुमान किया जाता है कि अब तक बोना गुटी में इतना कच्चा मात इतद्वय कर लिया है कि जिन्हे 30 हजार मैगाटन शक्ति के परमाणु बम्ब बजाय जा सकते हैं। गनी मात्र भी परमाणु शक्ति के तत्काल कच्चे मात में इतनी गंभीरक शक्ति मौजूद है या अपेक्षा कीये। यहाँ के 90 प्रतिशत नाभरिकों को नष्ट कर सकती है।

इन भयानक स्थिति तक पहुँचने के बाद भी अभी तक नगर के बड़े चण्डा की भाँगे नहीं गयी है। अभी तो वे निम्नोच्च परमाणु विस्फोट (एन डाय 10 मैगाटन बमपैरा और इम्पीज द्वारा 12, मैगाटन और जैन डाय एक मैगाटन के कुछ कम) सम्बन्धी बरीयतों

को करने वाले या रहे हैं। स्मरण रहे कि इसमें अमरीका द्वारा मात्र कस हो रहे परमाणु परीक्षणों से मुक्त घातक सामान नहीं है जो लगभग 20 मीमाटन के बराबर होगी। परीक्षणों से मुक्त यह घातक, द्वितीय महायुद्ध में सभी भातों से जितनी विस्फोटक घातक मुक्त हुई उसका भी सैकड़ों गुना अधिक है। यह हास तो मात्र घातिकात्मीय परीक्षणों से ही है पर यदि परमाणु युद्ध हो गया तो क्या हास होगा ?

धर्मकर नतीजे

घातिकात्मीय परीक्षणों से ही इतने मयकर दुष्परिणाम होने वाले हैं जो मनुष्य जाति की अंतिम खानने के लिए काफी हैं। क्योंकि इन से जो विकिरण घातक रूप में रेडियो सक्रिय सोडियम-90 मुक्त हुआ है वह ही जाने जाने 30 वर्षों में उद्भूत मान घातिकात्मीय के लिए स्त्रोमिया नामक अणु रोग के रूप में मृत्यु का कारण बनेगा और 50 हजार लोगों की मृत्यु इसमें पैदा हुए हृद्दयी के फोड़ों के कारण होगी। इसका प्रभाव मृत्यु संख्या पर यह बढ़गा कि मनुष्य जाति की मृत्यु संख्या प्रति सप्ताह 2 व्यक्ति और बढ़ जायगी।

उपरोक्त आंकड़े इस आधार पर दिये गये हैं कि स्ट्रोमियम-90 का अर्ध जीवन 30 वर्ष होता है किन्तु

दिन और को होगा। यदि हमने के समय हुआ की रिखा  
 दरिद्र पुरं हुई तो इन मृत्तकों में से अधिकांश इन के  
 भरकों नागरिक मृत्यु का चिकार बन जायेंगे। यद्यपि  
 जापान और वहाँ तक कि फिलिपाइन शत्रु तक पर भी  
 इसका तहारक प्रभाव पड़ेगा। किन्तु यदि वामु इसके  
 विपरीत दिशा में बहती है तो परिष्पी योरोप के भरकों  
 नागरिक इन हमभ का चिकार होंगे।

### घनघोर रूप से भयानक सड़ाई

ऐसी घनघोर रूप से भयानक सड़ाई के लिए आज  
 बानी विपरीत रीतियों में रहें हैं और अनुमान किया जाता  
 है कि अब तक बोनो कुटों में इसका कच्चा मान इकट्ठे  
 कर लिया है कि जिसमें 30 हजार मैगाटन धातु के पर  
 मालु सम्भ बनाये जा सकते हैं। बानी आज भी परमाणु  
 धातु के लक्षित कच्चे मान में इसकी महारक धातु मौजूद  
 है जो अचरित्य संघ। ऐसी के 90 प्रतिशत नागरिकों को  
 नष्ट कर सकती है।

इन भयानक स्थिति तक पहुँचने के बाद भी अभी  
 तक नगर के बड़े चप्टों की जगें नहीं गुनी हैं। अभी  
 तो वे निर्जोष करमाणु बिशोट (हम हाथ 170  
 मैगाटन बरतीना और इर्मैण्ड हाथ 120 मैगाटन और  
 बॉम हाथ एक मैगाटन के कुछ बर) सम्भनी पटीसगों

को करने बने जा रहे हैं। स्मरण रहे कि इसमें अमरीका द्वारा काम कम हो रहे परमाणु परीक्षणों से मुक्त शक्ति घातिल नहीं है जो लगभग 20 मैगाटन के बराबर होगी। परीक्षणों से मुक्त वह शक्ति द्वितीय महायुद्ध में सभी शारों से जितनी बिस्फोटक शक्ति मुक्त हुई उसका भी संकड़ों गुना अधिक है। यह हास तो काम शान्तिकामीन परीक्षणों से ही है पर यदि परमाणु मुक्त हो गया तो क्या हास होगा ?

भयंकर नतीजे

शान्तिकामीन परीक्षा से ही इतने भयंकर दुष्परिणाम होने वाले हैं जो मनुष्य जाति की आँखें खोलने के लिए काफी हैं। क्योंकि इन से जो विकिरण प्रकृति के रूप में रेडियो सक्रिय स्ट्रोनिमम-90 मुक्त हुआ है वह ही जाने जाने 30 वर्षों में बड़े मात्रा व्यक्तियों के लिए स्क्रूकमिया नामक अत्यु-रोग के रूप में मृत्यु का कारण बनेगा और 50 हजार लोगों की मृत्यु इससे पैदा हुए हड्डी के खोड़ों के कारण होगी। इसका प्रभाव मृत्यु संख्या पर यह पड़गा कि मनुष्य जाति की मृत्यु संख्या प्रति सप्ताह 2 व्यक्ति और बढ़ जायेगी।

उपरोक्त आँकड़े इस आधार पर लिये गये हैं कि स्ट्रोनिमम-90 का अर्ध जीवन 30 वर्ष होता है किन्तु



यदि इस सम्भावित बिनाश का औसत एक घंटाभी पर फैलावा था तो 100 मैगाटन फिलान क्षति से मुक्त स्टाटिस्म-90 के कारण पैदा होती है तो बिनाश के उप-रोक्त मांकड़े दुपमे हो जायेंगे ।

परीक्षणों से मुक्त रेडियो सक्रिय कार्बन 14 के कारण 30 लाख मृत्यु होंगी जिनमे से 10 प्रतिशत यानी 15 हजार भगनी पीडी में ही हो जायेंगी । इसके अतिरिक्त इन परीक्षणों से मुक्त वा इमारे रेडियो सक्रिय पदार्थ मुक्त हुए हैं उनसे वायु + मात विषैयक मृत्यु होंगी । मृतकों की इन मर्यादा में केवल बाल मृत्यु (जिसमें मरे हुए नवजात भी शामिल हैं) हो शामिल की गई है । (बर्मा-बस्ता और नवजात बच्चों की मृत्यु इनमें शामिल नहीं की गई है) इन आंकड़ों में यह मात बाहिर है कि अब तक जो परीक्षण हुए हैं उन से होने वाला बिनाश ही भवकर है और यह जल्दी ही मया है कि इन बात का सम्पदन दिया जाय कि स्टाटिस्म-90 बाताबरम के फिम ठन तक मौजूद है उन रेहानी धेना में इन प्रकार के सम्पदन करन की अत्य-धिक आवश्यकता है जो नगर रोजा से वृषक पड़े हैं । इनके मात मर भी मार लगना आवश्यक है कि स्टाटिस्म-90 से उन धनों में उदगेत अनुमान से नहीं अधिक मृत्यु होगी जहाँ मात अपनी ईमपिस्म मादरबातावे बरस्वति

(दूब रही) धोतों से पूरी करते हैं और वहाँ कम पोषक खाद्य पदार्थों को मिलाते हैं।

सहाराक युद्ध ध्वज गृहों पर भी

आदमी इन सहाराक युद्ध को पृथ्वी पर तक ही सीमित नहीं करना चाहता। वह तो इस मक़ाई को दूसरे ग्रहों पर भी से जाने के मनसूबे बना रहा है। यह बात कम रीकी बामु केमा के एक जनरल की आम मिनी बातों में साफ़ बाहिर होती है जो 'आई एच० स्टोम्य बीनमी' के 20 जनवरी 1950 के अंक में प्रकाशित हुई थी। यह स्पुतनिक छोड़े जाने से पहले की बात है। इस जनरल ने रीम्य सेबाओं की हाउसु बमेटी के सामने बयान देते हुए कहा था 'बदि अमरीका अन्तमा पर प्रेष्ठन अरुषी का केन्द्र बना लना तो इस स्थान में हाइड्रोजन बम्बों के सुमश्रित निर्देगित प्रेषण अरुष पुम्बी के बिनी भी भाष के लिए छोड़े जा सकेंगे।'

उनका बीच में टोक कर जब किसी ने उनको यह बताया कि कम भी ऐसा कर लयना है तो उन्होंने कहा "अमरीका को संयम और शुक पर भी अधिकार कर लेना चाहिए। (क्योंकि उन समय यह समझा जाता था कि हम जाने इन तक पहुँच ही नहीं सयन।) हमसे बाहिर है कि यदि पुना और अय का बाठावरण बराबर

यदि हम सम्भावित बिनाय का औसत एक सप्ताहों पर  
 कैंसाया जाय या 100 मैगाटन डिग्राय शक्ति से मुक्त  
 स्लोमियम-90 के कारण पैदा होगी है तो बिनाय के उन  
 दोस्तों को बुझने हो जायेंगे ।

परिोजना से मुक्त रेडियो सक्रिय कार्बन-14 के कारण  
 39 लाख मृत्यु होगी जिनमें से 10 प्रतिशत यानी 15  
 हजार मरने की संख्या में ही हो जायेंगी । इसके अतिरिक्त  
 इन परीक्षणों से मुक्त जो दूसरे रेडियो सक्रिय पदार्थ  
 मुक्त हुए हैं उनमें कार्बन + मान विनियम मृत्यु होगी ।  
 मृतकों का इस मरना से कलकाल मृत्यु (जिसमें मरे हुए  
 पदार्थ भी शामिल हैं) ही शामिल की गई है । (यथा-  
 बस्ता और नवजात बच्चों की मृत्यु इसमें शामिल नहीं की  
 गई है) इन लोगों से यह माफ़ बाहिर है कि अब तक जो  
 परीक्षण हुए हैं उन से होने वाला बिनाय ही भयंकर है  
 और यह बकरी हो गया है कि इस बात का अध्ययन किया  
 जाय कि स्लोमियम-90 बाधावरण में किस तम तक सीमूह  
 है उन देशों में इस प्रकार के अध्ययन करने की बत  
 कि आवश्यकता है जो नगर क्षेत्रों से दूरक पड़े हैं । इस  
 बात पर भी दाद रचना आवश्यक है कि स्लोमियम-90 से  
 उन क्षेत्रों में उन्नत अनुमान से नहीं अधिक मृत्यु होगी  
 जहाँ लोग अपनी वैज्ञानिक आवश्यकतायें बनस्पति

(दूध नहीं) घोंटों से पूरी करत हैं और जहाँ कम पोषक  
साध लागो को मिलाते हैं।

सहाराक कुछ अन्य गृहों पर भी

आदमी इस सहाराक कुछ को पृथ्वी यह तक ही सीमित  
नहीं रतना चाहता। वह तो इस सहारा को दूसरे गृहों  
पर भी लाने का मनसूब बना रहा है। यह बात कम  
सीबी वायु सेवा के एक जनरल की भाग लिखी बातों में  
साफ जाहिर होगी है जो 'आई एण्ड स्पेस बीकनी' के  
२० अक्टूबर १९५७ के अंक में प्रकाशित हुई थी। यह  
स्वयंत्रिक छोड़े जाने से पहल की बात है। इस जनरल ने  
सैन्य सेवाओं की हाइम कमेटी के सामने बयान देते हुए  
कहा था 'यदि अमरीका चाहेगा पर प्रत्येक अन्तों का  
केन्द्र बना सके तो इस स्थान में हाइड्रोजन बम्बों में  
सुमजिष्ठ किन्तु प्रेषण करने पृथ्वी व किमी भी भाग  
के लिए छोड़ जा सकते हैं।'

उसकी बोध में टोक कर जब किमी ने उनको यह  
बताया कि कम भी ऐसा कर सकता है तो उन्होंने कहा  
"अमरीका को योग्य और शुरू यह पर भी अधिकार कर  
लेना चाहिए।" (क्याकि उस समय यह समझा जाता था  
कि कम जाने इस तक पहुँच ही नहीं सकता।) इसमें  
जाहिर है कि यदि पृथ्वी और अन्त का बाधाबन्ध बरकर

बना रहा तो मनुष्य विनाश के इस तात्कालिक मृत्यु की पृथ्वी पर ही नहीं अन्तरिक्ष में भी पैदा होगा ।

परमात्मा अस्त्रों से पैदा हुए मय का प्रभाव आज इस भयानक स्थिति को पहुँच गया है कि लड़ने वाले शत्रुओं पक्षों में लाखों मैन्याटन शक्ति के परमात्मा अस्त्र न कबल बना कर रख लिए हैं बरन् उनको इस भाँति सजाया हुआ है कि कुछ मिनटों से लेकर कुछ घण्टों तक में ही उनको पूर्ण निश्चित लक्ष्यों पर छोड़ा जा सकता है । वे लक्ष्य आमतौर पर या तो बड़े-बड़े नगर हैं या अत्यधिक जन संख्या वाले क्षेत्र हैं । परमात्मा युद्ध में परमात्मा अस्त्र छोड़ने वाली पनहुस्त्रियों आदि जैसे सैन्य मय की अपेक्षा नगर मय अतिरिक्त सामर्यायक समझे जा रहे हैं बिनसे एक साथ ही न कबल लाखों करोड़ों लोगों की मृत्यु होती है बरन् आज जनता का ध्यात्म विश्वास और नैतिक बल भी समाप्त हो जाता है ।

आज पृथ्वी पर इन परमात्मा अस्त्रों के कारण भयानक मय मनुष्य के छिर पर तसवार की तरह लटक रहा है और पता नहीं कब यह नाब उध पर फिर पड़े । यदि विनाशकारी शक्तियों को समझ रहते नहीं रोका गया तो निश्चित ही एक दिन मानवीय भावनाओं का ऐसा विस्फोट होगा जो परमात्मा की सहायता से सम्पूर्ण मानवता को सदा के लिये मिटा देगा ।

## मुद्र रोकने के लिये सामूहिक प्रयत्न

अभी कुछ समय पहल थी एस० एफ रिपोर्टिंग ने मुद्रों के बारे में एक बड़ा विमर्श साप्तीय विमर्श किया है। इस विमर्श से यह गतीजा निकलता है कि सामान इतिहास के लम्बे युगों में मुद्रों का बितरण 'स्वीचन बितरण' के नियमानुसार होता है। यह बितरण नियति या भास के ऊपर निर्भर करता है। इसलिये मनुष्यों के केवल चाहने भर से मुद्रों को नहीं रोकना जा सकता। सम्भावनाओं पर आधारित कभी भी फूट पड़ने वाले मुद्रों जैसी घटनाओं को केवल सामूहिक प्रयत्न और सहयोग के द्वारा ही रोकी जा सकती है। यह ठीकी हो सकता है जब हमारे आरथ पवित्र हों और उद्देश्य बहुत ऊँचे हों। आज हम एक ऐसे बीरघड़े पर खड़े हैं जहाँ से हम चाहें तो ऐसी दुनियाँ में प्रवेश कर सकते हैं जो विज्ञान और अध्यात्म के समन्वय से बनने वाली है या चाहें तो ऐसे रास्ते पर जा सकते हैं जहाँ सम्पूर्ण मानव समाज अपने से टकरा जा सकता है। हमें कौन-सा रास्ता चुनना है यह सोचने में हम जितनी बेरी करोगे उतना ही संकट बढ़ता जायेगा। मनुष्य ने अपने प्रयत्नों से ऐसी वैज्ञानिक उपलब्धियाँ प्राप्त कर ली हैं जिनके कारण वह आज एक विराट विमर्श का नागरिक बनने जा रहा है। सत्य यह है

कि वह अपनी दुर्बलता और अहमता से कभी परमाणु  
अस्त्रों के सपिनाकार मॉडर में न फँस जाये । इस लिए  
इस विद्या में आज जो भी छोटे से छोटा काम होगा वह  
निश्चय ही हमें इस संकट से दूर करने में सहायता  
करेगा ।



वि  
ज्ञा  
न

सा  
हि  
त्य

और

मा  
न  
व

3



विज्ञान तन्त्र की संज्ञा करता है और भाषा  
इस तन्त्र की व्यक्तित्व देती है। इसलिये भाषा की  
प्रगति विज्ञान के लिये और विज्ञान की प्रगति भाषा  
के लिये शरदात्मक है।

## वैज्ञानिक शब्दावली

आधुनिक जगत का रूप अब बहुत कुछ विज्ञान द्वारा निश्चित होने लगा है। विज्ञान का प्रत्यक्ष और अपेक्ष रूप में मनुष्य और अन्य पशुओं पर जो प्रभाव पड़ता है वह भी संसार के आधुनिक रूप को निश्चित करने में महत्वपूर्ण भाग अदा करता है। विज्ञान को आगे बढ़ाने में और उसके विकास में अनेक देशों के लोगों ने जिसमें हमारे देश के लोग भी शामिल हैं काफ़ी योगदान किया है। यथाई तो यह है कि विज्ञान सम्पूर्ण मानव समाज का सम्मिलित प्रयास है और इसी कारण हमेशा असाधारण बलि से दिन रूनी रात बीगनी लग्गकी हुई है। संसार को एकता की मर्दी में विरोध और सांस्कृतिक दुष्टि में हमका बहुत बहुर प्रभाव है क्योंकि इनक जाहती और उद्वेग विनक बारे में यह निरन्तर शोध करता र्छता है सार्वभौमिक है और के साम्प्रदायिक राष्ट्रीय और बाद-विचारों की सीमा से परे है। विज्ञान स्वर्ण नहीं सहयोग चाहता है और इतका आधार मनुष्य की सहती आकांक्षाओं और सर्वोच्च साधर्म्य में निहित है

## वैज्ञानिक प्रगति का आधार

वैज्ञानिकों के बीच स्वतंत्र रूप से ज्ञान के बारे में विचारों का आदान प्रदान सदा से ही वैज्ञानिक प्रगति का आधार रहा है और आज भी प्रमुख रूप से वैज्ञानिक प्रगति का यही आधार है। विचारों का यह आदान-प्रदान वैज्ञानिक पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से होता है और राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक विचार गोष्ठियाँ और सम्मेलन इसमें सहायता पहुँचाते हैं। यह माना कि एक विश्व मापा का न होना इन विचारों की बदला बदली में बहुत बड़ी रुकावट है लेकिन ऊपर से यह बिठनी बड़ी दिखाई पड़ती है वास्तव में उतनी है नहीं। विज्ञान के विकास के प्रारम्भिक दिनों (17 वीं शताब्दी) में पश्चिमी यूरोप में ईसाई-संसार में ज्ञान-विज्ञान को सीखने की आम भाषा लैटिन थी। इसलिये जब विज्ञान में नये नये शब्दों की आवश्यकता होती थी तो या तो लैटिन के शब्दों से (साथ ही ग्रीक से भी) नये शब्द बनाये जाते थे या उनका वैज्ञानिक संसार में विचारों को समझने के लिए आधार लेकर विविष्ट अर्थ दे दिये जात थे। बाद में धीरे धीरे बहुत सी वैज्ञानिक पुस्तकें योरोपीय भाषाओं में लिखी जाने लगी जिनमें अंग्रेजी फ्रेंच और जर्मन सबसे महत्त्वपूर्ण हैं।

न्यूटन ने अपना प्रसिद्ध वैज्ञानिक ग्रन्थ 'प्रिन्सिपिया' लैटिन में लिखा था। यह पहली बार 1687 में प्रकाशित हुआ था। इसका अंग्रेजी अनुवाद लगभग 100 वर्ष बाद 1772 में प्रकाशित हो पाया। न्यूटन ने अपना दूसरा ग्रंथ 'ऑप्टिक्स' जो विशेष रूप से व्यावहारिक विज्ञान से सम्बन्धित था अंग्रेजी में ही लिखा जो 1704 में प्रकाशित हुआ। इसका लैटिन में अनुवाद ही वर्ष बाद हुआ। 17 वीं शताब्दी में यह बात इतनी महत्वपूर्ण नहीं थी जिसकी कि आज है और न उस समय ज्ञान के प्रसार में अंग्रेजी और लैटिन में अपने के कारण कोई विशेष ही अन्तर पड़ता था। लेकिन यह माप रखन की बात है कि 'प्रिन्सिपिया' जैसे वैज्ञानिक ग्रन्थ के गणितीय रूप को लैटिन जैसी समुद्रिणी भाषा में ही अच्छी तरह लिखा जा सकता था जबकि "ऑप्टिक्स" जैसे व्यावहारिक विज्ञान की पुस्तक नए अंग्रेजी में भी लिखी जा सकती थी। और यही हुआ भी था। प्रसिद्ध वैज्ञानिक लैप्लेस ने अपने वैज्ञानिक ग्रन्थ "मैकेनिकल सेमेरटे" फ्रेंच भाषा में लिखा था जबकि नौवें आमतौर पर लैटिन में ही लिखा था।

## दूसी ओर अंग्रेजी अक्षरी

मात्रकत समय 10 लाख मौखिक वैज्ञानिक और टैक्नीकल सेग तथा लगभग 50 हजार वैज्ञानिक और

टैक्नीकल पुस्तकें और पुस्तिकायें और इतनी ही रिपोर्टें  
 प्रतिवर्ष प्रकाशित होती हैं। और यह साहित्य मुख्य रूप  
 से अंग्रेजी और उर्दू भाषा में लिखा जाता है। इन दो  
 भाषाओं ने वैज्ञानिक साहित्य में जो स्थान बना लिया है  
 वह इस बात का द्योतक है कि इन भाषाओं के बोलने  
 वाले लोगों ने विज्ञान के विकास में कितना योगदान किया  
 है। 50 प्रतिशत से भी अधिक वैज्ञानिक साहित्य अंग्रेजी  
 में ही प्रकाशित होता है। इतने बाद जर्मन और फ्रेंच  
 भाषा का स्थान है किन्तु इनका महत्व बाध उठना नहीं  
 रहा कितना बाध से लगभग 20 वर्ष पहले था।  
 उस में महत्वपूर्ण वैज्ञानिक पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकों के  
 अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित किये जाते हैं और सोवियत  
 संघ की विज्ञान एकेडेमी बड़े पैमाने पर रूसी भाषा में  
 अन्य भाषाओं के वैज्ञानिक साहित्य का अनुवाद प्रकाशित  
 करती है।

आज ऐसे प्रत्येक वैज्ञानिक को जो अपने अध्ययन

प्रकार की एलेक्ट्रॉनिक मशीनें बना भी पायेंगी जो एक मापा से दूसरी मापा में अपने आप अनुवाद कर सकेंगी। काब्रन सोवियत मूनिषन में विज्ञान एकेडेमी के अन्तर्गत 'एक्स्पेरिमेंटल और कम्प्यूटिंग टैक्निक संस्था' मशीनों द्वारा अनुवाद का काम करने की सोच में बड़े व्यापक रूप से लगी हुई है। यहाँ पर रूसी चीनी जर्मनियन जापान बुल्गारियन इंडोनेशियन अरबी विमलनाम अंग्रेजी बर्मी गारुडियन टर्किश हिन्दी आदि में अनुवाद करने वाली मशीनों पर काम हो रहा है। इस सम्बन्ध में एक और बड़ी दिग्दर्शक समस्या विभिन्न वर्गों पर रखने वाले बुद्धिबियों के बीच विचारों के आदान प्रदान के लिए एक मापा का विकास है जो निश्चित भविष्य में ही व्यापक रूप से महत्वपूर्ण हो पायेगी।

### पारिभाषिक सम्भावना की अवरत

वैज्ञानिक चिन्तन और वैज्ञानिक विचारों के आदान प्रदान के लिए एक सुस्पष्ट पारिभाषिक सम्भावना का उपयोग बहुत जरूरी है जो विज्ञान की प्रत्येक शाखा के लिए विशिष्ट होती है। एक पारिभाषिक सम्भव का रूप अर्थात् जिस तरह द्वारा वह वैज्ञानिक विचार बाहिर किया जाता है एक मापा में दूसरी भाग में आसानी पर अलग-अलग होता है लेकिन फिर भी समझे

टीकनीकस पुस्तकें और पुस्तिकायें और इतनी ही रिपोर्टें  
 प्रतिवर्ष प्रकाशित होती हैं। और यह साहित्य मुख्य रूप  
 से अंग्रेजी और कहीं भाषा में लिखा जाता है। इन दो  
 भाषाओं ने वैज्ञानिक साहित्य में जो स्थान बना लिया है  
 वह इस बात का द्योतक है कि इन भाषाओं के बोलने  
 वाले लोगों ने विज्ञान के विकास में कितना योगदान किया  
 है। 50 प्रतिशत से भी अधिक वैज्ञानिक साहित्य अंग्रेजी  
 में ही प्रकाशित होता है। इसके बाद जर्मन और फ्रेंच  
 भाषा का स्थान है किन्तु उनका महत्व मात्र उतना नहीं  
 रहा जितना आज से लगभग 20 वर्ष पहले था।  
 जहाँ में महत्वपूर्ण वैज्ञानिक पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकों के  
 अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित किये जाते हैं और छोमियत  
 यूनिवर्स की विज्ञान एकेडेमी बड़े पैमाने पर कहीं भाषा में  
 अन्य भाषाओं के वैज्ञानिक साहित्य का अनुवाद प्रकाशित  
 करती है।

आज ऐसे प्रत्येक वैज्ञानिक को जो अपने अध्ययन  
 और पठन-पाठन को आगे बढ़ाना चाहता है और अनु-  
 संधान करना चाहता है यह बकरी हो गया है कि  
 कहीं या अंग्रेजी भाषा में से किसी एक का अच्छा  
 ज्ञान उसे प्राप्त हो और यदि वह दोनों भाषाओं जानता है  
 तो यह उसके लिए सीने में सुहावे का काम करता है। यह  
 समयग निश्चित ही है कि जाने जाने क्यों म कुछ एक

प्रकार की एलेक्ट्रॉनिक मशीनें बना भी पायेंगी जो एक मापा से दूसरी मापा में अपने आप अनुवाद कर सकेंगी। आजकल सोवियत मूनियन में विज्ञान एकेडेमी के अंतर्गत "एक्स्पैट मैकेनिक्स और कम्प्यूटिंग टैकनिकल सर्विस" मशीनों द्वारा अनुवाद का काम करने की खोज में बड़े व्यापक रूप से सधी हुई है। यहाँ पर रूसी चीनी जर्मनियन जापानियन फ्रान्सियन इंग्लिशियन जारबी नियतनाम अंग्रेजी बर्मी गारबियम टर्किय हिन्दी आदि में अनुवाद करने वाली मशीनों पर काम हो रहा है। इस सम्बन्ध में एक और बड़ी क्लिष्टता समस्या विभिन्न प्रश्नों पर रहने वाले बुद्धीबियों के बीच विचारों के आदान प्रदान के लिए एक मापा का विकास है जो मिश्रित मन्विष्य में ही व्यापक रूप से महत्वपूर्ण हो पायेगी।

### पारिभाषिक शब्दावली की जरूरत

बैज्ञानिक चिन्तन और बैज्ञानिक विचारों के आदान प्रदान के लिए एक मुस्पष्ट पारिभाषिक शब्दावली का उपयोग बहुत जरूरी है जो विज्ञान की प्रत्येक शाखा के लिए बिलिष्ट होती है। एक पारिभाषिक शब्द का रूप अर्थात् जिस शब्द द्वारा वह बैज्ञानिक विचार बाहिर किया जाता है एक मापा से दूसरी मापा में आसानी पर असय-असय होता है लेकिन फिर भी उसमें



निश्चित विचार परिभाषा द्वारा सुनिश्चित कर दिया जाता है। उदाहरण के लिए 'बेय' शब्द जर्मन में 'नेचबिदिक्केट' फ्रेंच में 'बिटेरी' इती में 'स्कोरीनच' और जापानी में 'सोकूबो' है। पर इन सभी शब्दों से 'बेय' का भाव ही बाहिर होता है। किसी भी वैज्ञानिक शब्द के अर्थ एक भाषा से दूसरी भाषा में ले जाने पर सम्पूर्ण रूप से सुरक्षित कर दिये जाते हैं। फिर मते ही वे दोनों भाषायें कितनी ही विभिन्न क्यों न हों। लेकिन इन अलग-अलग भाषाओं में इस वैज्ञानिक विचार के लिए अलग-अलग शब्द इस्तेमाल किये जाते हैं। विज्ञान के क्षेत्र साहित्य में शब्द के अर्थों की सुनिश्चित रूप से व्याख्या नहीं की जाती। उनके चारों ओर घटा ही भ्रान्ति का एक ऐसा कोहरा छाया रहता है जिसके कारण अनुबाध करने पर वही बात मही या पाठी को मूल में निश्चित थी। इस सम्बन्ध में पी. डी. सी. डेटमान ने अपनी पुस्तक 'आन लैप्पुएव एन्ड लीग' में जो विचार व्यक्त किये हैं उनमें से कुछ यहाँ पर उद्धृत किये जा रहे हैं। केंच कविताओं के अंग्रेजी अनुबाध में से एक भी ऐसा नहीं है जो मूल कविता के भावों की गम्भीरता और सीधर्य का आधा प्रभाव भी उपस्थित कर सके। — वैज्ञानिक साहित्य की छोड़ कर साहित्य में कोई भी ऐसा शब्द नहीं है जो सभी परिस्थितियों में अंग्रेजी के केवल एक और

उसी शब्द के समानार्थ ही हो (देखिये टी० एच० संवीरी द्वारा लिखित 'वाउबिब एमंग बर्न आफ साईस' १९२१)।

बेप्रेची का साईस शब्द ही एक बड़ा विमिश्रण उदाहरण है। साईस शब्द के लिए वही भाषा में 'नौका' और जर्मन भाषा में 'विशिनशैफ्ट' इस्तेमाल किये जाने हैं। यद्यपि बेप्रेची के साईस शब्दके अर्थ 'नौका' व 'विशिनशैफ्ट' की तुलना में बहुत ही संकुचित है। सच तो यह है कि कभी शब्द नौका के तुल्यक कोई शब्द है ही नहीं।

ऊपर जिन बातों की चर्चा की गई है उनके अनुसार यह कहा जा सकता है कि विज्ञान किसी शब्द के अर्थों को निर्दिष्ट करता है जबकि भाषा उस शब्द को निर्दिष्ट करती है। ऐम सन्दर्भ में हम इस बहुभाषी संसार में विज्ञान की एक समान भाषा की बात करते हैं क्योंकि किसी भी वैज्ञानिक शब्द के अर्थ विज्ञान में निहित होते हैं। लेकिन शब्द भाषा विभाग से सम्बन्धित होता है जो अमक व्याकरण और शक्य विम्वार के नियमों में बंधा रहता है।

### अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली

वैज्ञानिक शब्दावली के सबसे बड़े महत्वपूर्ण शब्द वे हैं जो लगभग सभी महत्वपूर्ण योरोपियन भाषाओं में समान हैं। यद्यपि संख्या में वे अनेकानेक कम हैं। ऐसे शब्दों को

निहित विचार परिभाषा द्वारा सुनिश्चित कर दिया जाता है। उदाहरण के लिए 'बैप' शब्द जर्मन में 'गेथबिडिकेट' फ्रेंच में 'बिटैरी' स्पैनी में 'स्कोरोर' और जापानी में "सोकूबो" है। पर इन सभी शब्दों से 'बैप' का भाव ही बाहिर होता है। किसी भी वैज्ञानिक शब्द के अर्थ एक भाषा से दूसरी भाषा में ले जाना पर सम्पूर्ण रूप से सुरक्षित कर दिये जाते हैं फिर भले ही वे दोनों भाषाओं किन्तनी ही विभिन्न नमो न हों। लेकिन इन अलग-अलग भाषाओं में इस वैज्ञानिक विचार के लिए अलग-अलग शब्द इस्तेमाल किये जाते हैं। विज्ञान-नेतर साहित्य में शब्द के अर्थों की सुनिश्चित रूप से व्याख्या नहीं की जाती उनके चारों ओर सदा ही भ्रमि का एक ऐसा कोहरा छाया रहता है जिसके कारण अनुबाध करने पर बड़ी बात नहीं आ पाती जो मूल में निहित थी। इस सम्बन्ध में श्री के. सी० शेटमान ने अपनी पुस्तक 'आन लेन्ग्वेज एण्ड थिन्किंग' में जो विचार व्यक्त किये हैं उनमें से कुछ बड़ी पर उद्धृत किए जा रहे हैं। फ्रेंच कविताओं के अर्थों अनुबाध में से एक भी ऐसा नहीं है जो मूल कविता के भावों की गम्भीरता और सौन्दर्य का भाव प्रभाव भी उपस्थित कर सके। - वैज्ञानिक साहित्य को छोड़ कर साहित्य में कोई भी ऐसा शब्द नहीं है जो सभी परिस्थितियों में अर्थों के केवल एक और

उसी शब्द के समानार्थ ही हो (वेबिमे टी० एच० मैबीरी द्वारा लिखित 'डार्जिंग एमंग बर्ड्स आफ साईस' १९२१)।

अंग्रेजी का साईस शब्द ही एक बड़ा विलक्षण उदाहरण है। साईस शब्द के लिए वही भाषा में 'नौका' और जर्मन भाषा में 'विचिनपीफ्ट' इस्तेमाल किये जाते हैं। यद्यपि अंग्रेजी के साईस शब्दके अर्थ 'नौका' व 'विचिनपीफ्ट' की तुलना में बहुत ही संकुचित है। सच तो यह है कि वही शब्द नौका के तुल्यक कोई शब्द है ही नहीं।

ऊपर जिन बातों की चर्चा की गई है उनके अनुसार यह कहा जा सकता है कि विज्ञान किसी शब्द के अर्थों को निर्दिष्ट करता है जबकि भाषा उस शब्द को निर्दिष्ट करती है। ऐसे सम्बन्ध में हम इस बहुभाषी संसार में विज्ञान की एक समान भाषा की बात करते हैं क्योंकि किसी भी वैज्ञानिक शब्द के अर्थ विज्ञान में निर्दिष्ट होते हैं। लेकिन शब्द भाषा विशेष से सम्बन्धित होता है जो उसके व्याकरण और वाक्य विन्यास के नियमों में बँधा रहता है।

### अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली

वैज्ञानिक शब्दावली ने सबसे बड़े महत्त्वपूर्ण शब्द वे हैं जो लगभग सभी महत्त्वपूर्ण योरोपियन भाषाओं में समान हैं। यद्यपि संख्या में वे अनेकानेक कम हैं। ऐसे शब्दों को

संशोध में अन्तर्राष्ट्रीय सम्भावनी कहा जाता है। इस सम्भावनी में तत्वों और उनके समूहों को बताने वाले संकेत भौतिक विज्ञान के एकदम और उनके स्थिरांक पत्रिका में उपलब्ध होने वाले संकेत और चिन्ह, पीछों और अणुओं के लिए बनाए गये वैज्ञानिक नाम जो बायोमिथल मैटिन नेम कहलाते हैं आदि शामिल हैं। अन्तर्राष्ट्रीय सम्भावनी के अर्थ भी आम तौर पर समान नहीं होते। वे अलग-अलग भाषाओं की प्रतिभा और प्रकृति के अनुरूप भिन्न होते हैं। किन्तु वे एक दूसरे के निमित्तान्तरित अर्थ ही होते हैं। यदि दो भाषाओं में लिपियों या वर्णमाला अथवा दोनों में बुनियादी तौर से विभिन्नता है जैसे अंग्रेजी और जापानी में तो दूसरे वैज्ञानिक शब्दों की समानता केवल सम्भारण तक ही रह जाती है और कभी-कभी तो यह भी नहीं रहती।

अभी जिस सम्भावनी को हमने अन्तर्राष्ट्रीय सम्भावनी के नाम से पुकारा है उसके अन्तर्गत अविश्वस्य विविष्ट वस्तुओं के नाम पत्रिका के संकेत और उनसे सम्बन्धित क्रियाएँ ही जाती हैं। जब हम भौतिक विज्ञानों और वस्तुओं के गुण वगैरे सहित बस अति उन्मादगतीकी आदि का वर्णन करते हैं तो स्थिति विशुद्ध बस जाती है और वह बदलनी भी चाहिए। टेक्नीकल सम्बन्ध आम तौर पर मोटे रूपों में दो वर्गों में विभाजित किये जा

सकते हैं। यद्यपि कभी-कभी कोई शब्द दोनों वर्गों में आ जाता है।

(क) ऐसे शब्द जो बोलचाल की भाषा से लिए गये हैं और जिनको एक निश्चित वैज्ञानिक अर्थ दे दिया गया है। ऐसे शब्द कभी-कभी उच्चारण लिए गये शब्द भी कहलाते हैं।

(ख) वे शब्द जो बोलचाल की भाषा में इस्तेमाल नहीं होते या होते हैं तो कभी-कभी। वे शब्द विशेष रूप से वैज्ञानिक प्रयोग के लिए बनाये जाते हैं।

विज्ञान द्वारा आम बोलचाल की भाषा से उच्चारण लिए गये शब्दों के अंग्रेजी भाषा में कुछ उदाहरण ये हैं —  
'बक' 'घस' 'सास' और 'चार'। शब्दों के व वर्ण उदाहरण यह हैं 'आइसोटोप' 'आइसोबार' 'सीम' 'टिपो एक्टीविटी' और 'क्वांटिबेशन'।

अन्तर्राष्ट्रीय सम्प्रदायों के शब्द आमतौर पर दूसरे वर्ग में आते हैं। किन्तु भौतिक विज्ञानों में उपयोग किये गये पारिभाषिक शब्दों की बहुत बड़ी संख्या ऐसी है जो उच्चारण लिये हुए शब्द हैं और जिनको एक निश्चित वैज्ञानिक अर्थ दे दिया गया है और जो बहुधा आम बोलचाल की भाषा के शब्दों से बिलकुल अलग होता है। इन बात को निश्चय करने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि टेक्नीकल शब्दों के किसी भी बहुभाषी शब्द कोय को देखने

पर इसका पता चल सकता है। जैसे — एम्बेडकर का 6 भाषाओं में 'नामिक विज्ञान और टेक्नोलॉजी का एक कोष' जो 1958 में प्रकाशित हुआ था। इसके अतिरिक्त हम पारिभाषिक और बोलचाल के नाम शब्दों के बीच में कोई निश्चित सीमा नहीं खींच सकते। यह कहा जा सकता है कि पारिभाषिक सम्भावनी सभी भाषाओं का एक अविभाज्य अंग होता है और किन्हीं भी दो भाषाओं की पारिभाषिक सम्भावनीयता उसी सीमा तक समान का समानार्थ शब्दों से सुसम्बन्धित होती है जिस अनुपात में उन दोनों भाषाओं में समानता होती है। उदाहरण के लिए, अंग्रेजी छँच स्पेसिफ और इटैसिपन भाषाओं में आमतौर पर टेक्नीकल सम्भावनी की समान होती है। जैसे अंग्रेजी का 'एसिड' इन भाषाओं में क्रमशः 'एसीडी' 'एसिडा' व 'एसिड' हो जाता है। बँटरी क्रमशः 'बँटरी' 'बँटरीया' और बँटरीया और सैल क्रमशः 'सैसूने' 'सैसूना' और 'सैसूना' हो जाता है। जब कि जर्मन एसियन और जापानी भाषाओं में एसिड और बँटरी क्रमशः सीरे, किससोटा और सन बँटरी बँटरीया और बँची हो जाती है।

### वैज्ञानिक सम्भावनी और भारतीय भाषाएँ

अपने देश की समस्त क्षेत्रीय भाषाओं के लिए एक सर्व समान वैज्ञानिक सम्भावनी का विचार स्पष्ट

सम्भाव्य होगा। वैज्ञानिक या अन्य कोई भी समान  
 शब्दावली बनाने के लिए यूरोपीय भाषाओं में कोई सामान्य  
 शब्दावली नहीं है और उनके लिए अनेक बहु  
 भाषी कोष बनाए गए हैं। परन्तु प्रत्येक भाषा के  
 शब्दों में भौतिकी का कोष प्रकाशित हो रहा है जिसमें  
 लगभग 15,000 शब्द होंगे। इन भाषाओं में से एक  
 भौतिकी में उपयोग किये गए शब्दों का बहुभाषी शब्द-  
 कोष होना निम्न एक ही शब्द के अंग्रेजी, फ्रांसीसी, जर्मन  
 स्पनी, रूसी, चीनी और जापानी भाषाओं में पर्याय  
 शब्दों और जिसकी सहायता से इन कोष में एक शब्द का  
 एक भाषा से दूसरी भाषा में जाना जा सकता है। इस कार्य  
 में कोई भाषाई भाषा शामिल नहीं की गई है।

### विज्ञान का माध्यम

शोधकर्ता को प्रयोग के लिए, स्थानीय विज्ञान के  
 माध्यम तथा विज्ञान को व्यापक रूप में लोकप्रिय बनाने  
 का काम उनी क्षेत्र की भाषा के माध्यम में होना  
 चाहिए। इसके लिये द्विभाषी शब्दावली का प्रयोग  
 भाषा तथा अंग्रेजी दोनों की वैज्ञानिक शब्दावली के प्रयोग  
 का सुझाव दिया गया है। वास्तव में इस दुर्लभ शब्दावली  
 का प्रयोग करने के लिए आवश्यक होगा क्योंकि



कानिब स्तर पर पाठ्य पुस्तकें अंग्रेजी तथा क्षेत्रीय भाषाओं दोनों में ही उपलब्ध होंगी और बच्चों के लिए विद्यार्थी को इन दोनों सम्भावितियों का ज्ञान आवश्यक होगा। कानिब-धारा के लिए उसके बड़े हुए अंग्रेजी ज्ञान का साथ-साथ अंग्रेजी वैज्ञानिक सम्वाहनी भाषानी से समझ में आती चायेगी क्योंकि स्कूल स्तर पर अपनी ही भाषा में अध्ययन करने के कारण वह अंग्रेजी वैज्ञानिक शब्दावली के अर्थों से पहले ही परिचित हो चुका होगा। इसके अतिरिक्त दो भाषाओं की सम्भावितियों का एक साथ प्रयोग परीक्षा रूप से भारतीय भाषाओं को समृद्ध करने में भी सहायक होगा। (अंग्रेजी की वैज्ञानिक सम्वाहनी अधिकार में नैटिन से व्युत्पत्ति है। यदि कानिब स्तर पर समुचित नैटिन बानुओं और प्रयोगों के मनन के लिए कुछ बटे दे दिये जायें तो इससे छात्र को वैज्ञानिक शब्दावली और बिलंब कर वैधिक विज्ञान सम्बन्धी सम्वाहनी को मनी प्रकार समझने में सहायता मिलेगी।)

### क्षेत्रीय भाषाओं में पुष्क सम्भावितियाँ

प्रमुक्त क्षेत्रीय भाषाओं के लिए वैज्ञानिक सम्भावितियों की आवश्यकता के कारणों पर पहले ही विचार किया जा चुका है और उन्हें संक्षेप में नीचे दिया जा रहा है।

(1) विज्ञान के इस युग में यदि किसी भाषा के

पाप वैज्ञानिक तथ्यों और विचारों को व्यक्त करने के लिए पर्याप्त शब्द प्रचलित नहीं हैं तो वह अपने महत्व और जीवन व्ययता को ही लो बीटो। एक समय या जब इस में सम्पूर्ण देश के लिए एक ही वैज्ञानिक वास्तविकी रखने का जमान था। पर जब उसके अलग-अलग राज्यों द्वारा अपनी क्षेत्रीय भाषाओं में ही वैज्ञानिक वास्तविकी के विकास की प्रकृति जल पड़ी है। विज्ञान की व्यापक प्रयत्न और क्षेत्रीय भाषाओं के विकास से इस प्रकृति को बहावा मिला है। वहाँ पर क्षेत्रीय भाषाओं में वैज्ञानिक वास्तविकियों के नाम को क्षेत्रीय विज्ञान अकादमी करती है।

(2) ज्ञान को अपनी ही भाषा (मातृ भाषा) में प्राप्त करने और वह भी विद्यय कर प्रारम्भिक कक्षा में प्राप्त करने के असीम व्यावहारिक लाभ को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। यदि तबनीवी शब्द विदेशी भाषा में है तो उन्हें समझना और स्मरण रगता कठिन होता है। दूसरी भाषा में बड़ने पर, लोते की तरह रटकर विभाग को आशयवता से अधिक जोर देकर जहाँ हमारी प्रतिभा जल होती है वहाँ कुतियाही बात को पूरी तरह समझ भी नहीं जाने। विदेशी भाषा में क्यों की वैज्ञानिक निष्ठा के बा भी भाषण में सम्बन्धित या समान शब्दों का जब टोक-टोक याद नहीं रहता जैसे : ऑबमेंट प्रीवट रोम या पिच एपीहीनियन पीपीहीनियन।

(3) विज्ञान की बुनियादी बातों की बड़ें प्रायः आदिम अनुसंधानों में निहित होती है। यदि कोई व्यक्ति किसी विचार को व्यक्त करने के लिए विज्ञान की कक्षा में एक शब्द तथा कक्षा से बाहर दूसरा शब्द प्रयोग करता है तो उसकी विज्ञान में वेद स्वाभाविक नहीं होगी और विषय के बोध और प्रासंगिकता को भारी क्षति हावी। इससे विज्ञान तथा अन्य विषयों की शिक्षा में असंगत उत्पन्न हो जायगा।

(4) यदि वैज्ञानिक शब्दावली कोमर्चाल को भाषा में निम्न होती है तो उस भाषा को जिन्होंने विज्ञान में रचना प्राप्त नहीं की विज्ञान की उन बातों को याद रखना मुश्किल हो जायेगा जो उन्होंने स्कूल में पढ़ी थी और इस तरह विज्ञान में उनकी क्षमि कम हो जायेगी।

(5) निपुण कारीगरों, क्लर्कों और व्यापारियों का प्रशिक्षण उनके क्षेत्र की भाषा के माध्यम से ही सबसे आसानी से हो सकता है।

### सिध्दान्तरण नहीं

(6) आमतौर पर यह व्यवहारिक नहीं हो पाता कि एक भाषा में व्यक्त किये विचारों को बाहिर करने वाले शब्द किसी दूसरी भाषा में इतनेभाक्त किये जा सकें। एक शब्द से अनेक सहयोगी शब्द बनते हैं और यदि एक शब्द

का ज्यों का त्यों दूसरी भाषा में लिखा जाता है ता मध्य  
 कथमा इसके मतसब यही होवे कि एक भाषा को दूसरी  
 भाषा में स्वामान्तरित कर दिया जाय। नये शब्दों को  
 निर्माण करने समय इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिए  
 कि उसका महसुगी शब्द भी बन सके। उदाहरण के लिए  
 अक्षरी में एक शब्द 'टू कण्डक्टर' है जिसने आमतौर पर  
 इस्तेमाल होने वाला भाषा जिसे पारिभाषिक शब्द बनत है  
 कण्डक्टर कण्डक्टर नामकण्डक्टर समीकण्डक्टर सुपर  
 कण्डक्टर कण्डकटीवीटी सुपर-कण्डकनीवीटी और  
 कण्डकनैमन।

यह बात औपधि शास्त्र के पारिभाषिक शब्दों के  
 बारे में और भी अधिक साफ़ होती है क्योंकि यह माना  
 कि वैज्ञानिक शब्दावली मरुपा में बहुत बड़ी है पर इसके  
 बुनियादी और मूल तन्त्र दिन चुन है। यदि इन मूल तन्त्रों  
 का अध्ययन सामान्य विद्या का एक अंग बन जाय ता एक  
 सामान्य ध्यन्धि भी वैज्ञानिक शब्दों में अधिकारा का इस  
 प्रकार विस्तारण कर सकना कि के समय में आन वाले  
 शब्द बन सके। पारिभाषिक शब्दों को के आमतौर पर  
 पृष्ठ के पृष्ठ एमा समुक्त शब्दावली में बने रहने हैं जिसका  
 संपत्ति रूप में एक या दो शब्दों के द्वारा लिखा जा  
 सकता है।

औपधि शास्त्र के शब्दों को जिसमें लगभग 30 हजार

एम्ब डोटे हैं इनकी 100 उपसर्गों 30 प्रत्ययों और शरीर के प्रमुख भागों को स्पष्ट करने वाले शब्दों से निष्ठा का संकटा है। (इसके बारे में भी डम्पू ई० फ्लड और एम बीस्ट 'बी वाकेनुसपी माफ साईंस' का लेल 'बी म्यू साइंस्टि (1957) पेज 9 और 17 पर देखिये)

विज्ञान को व्यापक पैमाने पर लोक प्रिय बनाने के लिए येनीय भाषा इस्तेमाल होनी जरूरी है। इसके लिए भाषा में आवश्यक पारिभाषिक सम्भावनी होनी अनिवार्य है। प्रजातन्त्र में विज्ञान को लोकप्रिय बनाने का प्रयत्न न केवल इसीलिए जरूरी है कि इहो विज्ञान को समझ कर उसे माने बढ़ाने में सहारा मिलेता लेकिन यह इसलिए भी जरूरी है कि मौलत नागरिक विज्ञान की बातें समझे बिना, जो नयी बुनियाँ हमारें सामने खुल रही हैं, उसके बारे में कुछ भी नहीं जान सकेगा।

### सम्भावनी की योजना

अब हमें सोचना है कि वैज्ञानिक सम्भावनी से सम्बन्धित हमारे काम की योजना क्या होनी चाहिए? विभिन्न विषयों की सम्भावनी के बीच में हम किस तरह ताल मेल बैठक सकते हैं और विभिन्न भाषायी के बीच में इस बारे में कैसे समन्वय स्थापित किया जा सकता है? किस तरह से हम सम्भावनाओं की इस्तेमाल करने का न स्म

और कानून के सिद्धकों से नयी धम्मावली के बारे में सहयोग प्राप्त कर सकते हैं ?

हमारे देश में विभिन्न संस्थाओं द्वारा विशेष रूप से केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा काफी महत्व का काम इस विधा में हो चुका है। निदेशालय ने सिखा महालय द्वारा स्थापित वैज्ञानिक धम्मावली मण्डल के निदेशन में काफी काम किया है। हमारे मैकग्री स्कूल के स्तर तक सभी विषयों की वैज्ञानिक धम्मावलियाँ बना ली गई हैं। मद्रास फिर भी इस क्षेत्र में बहुत कुछ करने की काफी है। स्नातकोत्तर स्तर तक धम्मावली बनाम के अतिरिक्त विज्ञान का लोकप्रिय बनाने के लिए हमें काम करना है और अब तक जो इस विधा में काम हुआ है उसको अन्तिम रूप देना है तथा जो नयी धम्मावली विकसित की गई है उनको समुचित रूप से उपयोग में लाना है।

उपरोक्त पृष्ठ भूमि में हिन्दी की वैज्ञानिक धम्मावली के विकास को एक सतत प्रक्रिया के रूप में देखना होगा जिसका विज्ञान और भाषा पर प्रभाव पड़ता है और जो स्वयं उसके विकास और प्रगति से प्रभावित होती है।

यहाँ यह बात धार रखने की है कि हमारे सामने यह एक रचनात्मक और यतिशील समस्या है जिसको हम न तो तथा के लिए चुनना करते हैं और न बीबी

सम्ब होठे हैं इनको 100 उपसर्गों 30 प्रत्ययों और शरीर के प्रमुख भागों को व्यक्त करने वाले शब्दों से लिखा जा सकता है। (इसके बारे में पी डब्ल्यू० ई फ्लड और एम० बीस्ट 'डी बाकेबुलरी बाफ साइंस' का लेख 'डी न्यू साइंटिस्ट (1957) पृष्ठ 9 और 17 पर देखिये)

विज्ञान को व्यापक पैमाने पर लोक प्रिय बनाने के लिए क्षेत्रीय भाषा इस्तेमाल होनी जरूरी है। इसके लिए भाषा में आवश्यक पारिभाषिक संख्यावली होनी अनिवार्य है। प्रकाशनात्मक विज्ञान को लोकप्रिय बनाने का प्रयत्न न केवल इसीलिए जरूरी है कि इससे विज्ञान को समझ कर उसे भागी बनाने में सहायता मिलेया लेकिन यह इसलिए भी जरूरी है कि मौखिक माध्यमिक विज्ञान की बातें समझे बिना जो नयी बुनियाद हमारे सामने लुप्त रही है उसके बारे में कुछ भी नहीं जान सकेगा।

## संख्यावली की योजना

अब हमें सोचना है कि वैज्ञानिक संख्यावली से सम्बन्धित हमारे काम की योजना क्या होनी चाहिए? विभिन्न विषयों की संख्यावली के बीच में हम किस तरह ठाक-मेक बैठ सकते हैं और विभिन्न भाषाओं के बीच में इस बारे में कैसे समन्वय स्थापित किया जा सकता है? किन्तु वहाँ से हम संख्यावली को इस्तेमाल करने वाला स्तून

और कार्बेज के सिखकों से नयी सम्प्रदायी के बारे में सहयोग प्राप्त कर सकते हैं ?

हमारे देश में विभिन्न संस्थाओं द्वारा विधेय रूप से केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा काशी महत्त्व का काम इस विद्या में हो चुका है । निदेशालय ने शिक्षा मन्त्रालय द्वारा स्थापित वैज्ञानिक सम्प्रदायी सम्मेलन के निदेशन में काशी काम किया है । हापर टीनेगुड़ी स्कूल के स्तर तक सभी विषयों की वैज्ञानिक सम्प्रदायी बना ली गई है । मकिन फिर भी इस क्षेत्र में बहुत कुछ करने की बाकी है । स्वतन्त्रोत्तर स्तर तक सम्प्रदायी बनाने के अनिश्चित विज्ञान को लाक्षणिक बनाने के लिए हमें काम करना है और अब तक जो इस विद्या में काम हुआ है उसको अन्तिम रूप देना है तथा जो नयी सम्प्रदायी विकसित की गई है उनको समुचित रूप से उपयोग में लाया है ।

उपरोक्त पृष्ठ भूमि में हिन्दी की वैज्ञानिक सम्प्रदायी के विकास को एक सतत प्रक्रिया के रूप में देखना होगा जिसका विज्ञान और भाषा पर प्रभाव पड़ता है और जो स्वयं उम्क विकास और प्रवृत्ति से प्रभावित होती है ।

वहाँ वह बात धार रखने की है कि हमारे सामने यह एक रचनात्मक और प्रतिप्रीत समस्या है जिसको हम न ही शब्द के लिए मुक्तता सकते हैं और न हीती



कोशिस हमें करना ही चाहिए । हम तो मात्र और निर्य  
 अभिष्य को पृष्ठ भूमि को प्यान में रलकर ही इसका  
 कोई ऐता संजीवनक हन निकाल सकते हैं जिससे विज्ञान  
 की पढ़ाई ज्ञान हो जाए और वह अनिजात वर्ष से  
 निकल कर ज्ञान जगता तक पहुँच सके । इससे ही देश  
 विज्ञान और औद्योगिकरण की ओर तेजी से प्रगति कर  
 सकेगा ।

अगर हमारी नयी संस्थापनी यह नहीं कर सकती  
 तो जो कुछ हम करेते यह करने योग्य नहीं है । किन्तु यदि  
 इस संस्थापनी से यह सम्भव हो सकता है तो यह काम  
 अत्यधिक महत्वपूर्ण है और इसे किया ही जाना चाहिए ।

## भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक साहित्य

भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक पाठ्य पुस्तकों की आवश्यकता पर सोचने समय पहना उद्यम यह उठता है कि हम वैज्ञानिक और इन्वीनिवर्सिटी की पाठ्य पुस्तकों को हिन्दी और दूसरी भारतीय भाषाओं में क्यों करना चाहते हैं ?

इसका उत्तर स्पष्ट है क्योंकि जब तक वैज्ञानिक विषयों पर पुस्तकें हिन्दी और देश की अन्य भाषाओं में उपलब्ध नहीं होती तब तक न तो देश के आम आदमियों को विज्ञान की उपलब्धियों से अधिक लाभ पहुँच सकता और न देश की वैज्ञानिक व औद्योगिक उन्नति ही तीव्र पति से हो पाएगी। हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य की कमी करत समय यह बात मरे ध्यान में रहती है कि आज हिन्दी के दो पहलू हैं—हिन्दी एक ओर राजभाषा मानी जाती है किन्तु दूसरी ओर यह 18 कराड़ भागों की मात्र भाषा भी है। मैं यहाँ पर हिन्दी के पहले रूप के बारे में चर्चा नहीं करता चाहँगा। अन्य भारतीय भाषाओं की तरह मैं हिन्दी के दूसरे रूप के बारे में बात कर रहा हूँ और मेरी

बात बिलकुल हींदी के लिए लागू होती है उतनी ही देश  
 की अन्य प्राबेधिक मापार्यों के लिए भी। जब तक हम  
 वैज्ञानिक ज्ञान को शुरू से अपनी भाषा में उपलब्ध नहीं  
 कराएंगे तब तक हम विज्ञान को जितनी जग में नहीं  
 पा सकते क्योंकि विज्ञान के बुनियादी तथ्य जामतीर पर  
 भारतीय ज्ञान प्राप्त करते समय ही स्वस्थ जग से  
 अलग होते हैं। पर यदि इस अवस्था में इन बुनियादी  
 बातों को बताने के लिए जग में एक अन्य भाषा की  
 सम्भावनी इस्तेमाल की जाती है और इसके बाहर दूसरी  
 तो बेचारा विद्यार्थी उलझन में पड़ जाता है। उसके  
 दिमाग में वैज्ञानिक ज्ञान उठने लहक डंग से नहीं पगप  
 पता और इन बुनियादी बातों के बारे में उसकी पकड़  
 इतनी बहरी नहीं हो पाती बिलकुल कि तब हो पाती जब  
 कि जगको अपनी ही भाषा में वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्त होता।  
 फिर यह भी जाब एक माना हुआ तथ्य है कि जिस भाषा  
 में व्यक्ति अपने को व्यक्त करता है, उस भाषा का उसके  
 विचारों पर भी अछर पड़ता है।

यही कारण है कि यूरोप में जाब से 300 वर्ष पूर्व  
 जिस जमाने में विज्ञान शुरू हुआ था और यूरोप में विद्वानों  
 की भाषा "लैटिन" थी उस समय वैज्ञानिकों का ध्यान  
 अपनी ही भाषा में लिखने के प्रश्न की ओर गया। उस  
 जमाने में लैटिन भाषा का इतना अछर था कि ग्लूटन

जैसे अंग्रेजी भाषामापी वैज्ञानिक मै जी अपना पहला ग्रन्थ "प्रिंसिपिया" 1687 में सैटिन में ही लिखा और 1772 में इसका अंग्रेजी में अनुबाद हो पाया। पर बाद में न्यूटन ने अपना दूसरा ग्रन्थ "ऑप्टिक्स" 1704 में अंग्रेजी में ही लिखा। इसका सैटिन अनुबाद दो बर बाद प्रकाशित हुआ। इसके बाद जब यूरोप के देशों की भाषाएँ परिष्कृत हो गईं तब विज्ञान इन देशों की भाषा में ही लिखा जाने लगा।

### हाथ और दिमाग का मिलन

इसी क्रम में अंग्रेजी फ्रेंच और जर्मन भाषाएँ वैज्ञानिक साहित्य की भाषाएँ बनीं और तभी इन देशों में विज्ञान व टेक्नामीजी का तेजी से विकास हुआ क्योंकि विज्ञान का विकास किसी देश में तभी होता है जब वहाँ के कारीगर और शिल्पकार—जो हाथ से काम करते हैं और तरह तरह के उपकरण बनाते हैं—उनको सुधारने और आविष्कृत करने के लिए दिमाग से सोचेंगी। और वे तभी ऐसा कर सकते हैं जब उनको अपने लोभ में हुई वैज्ञानिक प्रगति का हास मानूम हो। यूरोप में घस्य चिकित्सा का विकास इसी प्रकार हुआ था। वहाँ के जिन ह्यूमनों ने हाथ के काम के अतिरिक्त दिमाग से सोचा भी था वही बाद में जाकर

सर्जन बन गए। हमारे देश में भी आज यही स्थिति है।  
 हमें सोचना है कि हाथ से काम करने वाले और विमान  
 से सोचने वाले दोनों का मिलन किस प्रकार हो सकता है।  
 आज ऐसे अनेक दस्तकार और कारीगर हैं जिनको बरा  
 भी वैज्ञानिक ढंग से सोचने का मौका मिले तो वे अनेक  
 नम सुधार कर सकते हैं। इसलिए आज हिन्दी और भार  
 तीय भाषाओं में ऐसी पुस्तकों की आवश्यकता है जो  
 आसान भाषा में लिखी हों और जिनको पढ़कर हमारे कारी  
 गर और दिल्परकार अपने व्यवसाय को उन्नत कर सकें।  
 इससे न केवल उद्योग ही बढ़ेगा बल्कि विज्ञान भी उच्चतम  
 सिद्धर तक पहुँचेगा क्योंकि जब विज्ञान की पढ़ाई  
 हमारी अपनी भाषा में होयी तब हम प्रकृति को अधिक  
 सहज व वैज्ञानिक ढंग से समझ सकेंगे। दूसरी भाषा में  
 पढ़ने पर लोठे की तरह रटकर, विमान को आवश्यकता से  
 अधिक धोर देकर जहाँ हम अपनी प्रतिभा को मद करेंगे  
 वहाँ बुनियादी बात को पूरी तरह समझ भी नहीं पाएँगे।  
 मैं अपनी इस बात को एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट करना  
 चाहता हूँ मद्यपि उसका विज्ञान से सम्बन्ध नहीं है।  
 हमारे देश में "राम" एक ऐसा शब्द है जिसके पीछे भार  
 तीय संस्कृति का पूरा रूप छिपा हुआ है। अग्य देशों की  
 भाषाओं द्वारा "राम" शब्द का अनुवाद करके फिटनी ही  
 तरह क्यों न मयमाया आए, वह बात नहीं जा पाएगी जो

केवल "गम" शब्द के उच्चारण करने से भारतीय लोगों के मन में रोंका हाती है और विज्ञान बढ़ाने के बारे में भी येरा कुछ पेठा ही अनुभव है। विरबिद्यालय अनुदान आयोग के अम्मल होने के बाद भी मैं कभी कभी रिस्की विरबिद्यालय में एम एम-सी के विद्याचियों को पढ़ाने जाता हूँ। पढ़ाते समय कभी कभी ऐसी सम्भौर बातें आ पाती हैं जो बहुत से विद्याचियों की तभी समझ में आती हैं जब टेक्नीकल शब्द तो अन्तर्राष्ट्रीय सम्भावनी क ही हों पर विचार अपनी भाषा में ही व्यक्त किये गये हों। फिर वही भाषाएँ आज के वैज्ञानिक युग में जीवित रह पाती हैं जो विज्ञान और तकनीकी बातों को सही-भाँति स्पष्ट करने की अपन में क्षमता रखती हैं क्योंकि तभी वे वास्तविक प्रवाह बति और जीवन को प्राप्त करती हैं।

### महिस्त्राएँ वचित

विज्ञान और तकनीकी साहित्य को भारतीय भाषाओं में उपलब्ध कराना हमलिये भी जरूरी है क्योंकि आज के जीवन में वैज्ञानिक ज्ञान से सबसे अधिक वचित हमारी भाषाएँ और बड़ने हैं। वे सब से कम पढ़ी-लिखी हैं और जो पढ़ी लिखी हैं भी उनमें से अधिकाँस को अपनी ही भाषा का ज्ञान है। पर भारतीय भाषाओं में अच्छा वैज्ञानिक साहित्य उपलब्ध नहीं है, इसलिये वे वैज्ञानिक क्षेत्र में

आज से 100 वर्ष पीछे पढ़ पाई हैं और इसी कारण  
 इन्हीं सबसे अधिक शिपटी हुई हैं। हमारे देश की ग्रामीण  
 माटी को अत्यु शक्ति और राकेट जैसे भोकप्रिय धब्बों का  
 भी पता नहीं है। इस तरह हम यदि वैज्ञानिक ज्ञान को  
 अपनी ही भाषा में देने का प्रयत्न नहीं करते तो माटी के  
 रूप में देश की जाधी जनसंख्या वैज्ञानिक ज्ञान को नहीं  
 पा सकेगी।

मूर्त रूप देने में भय क्यों ?

यह चीज इतनी अनिर्धार्य होने पर भी इसको हम लोग  
 लागू क्यों नहीं करते इसका कारण धारण यह हो सकता है  
 कि हम प्रकृति से डरते हैं। यह बात अजीब सी लग सकती  
 है लेकिन निस्संदेह नहीं। महम्मद गांधी कहते थे कि 'हमें  
 आजादी इसलिए नहीं मिलती क्योंकि हम आजादी से  
 डरते हैं। यह सभी जानते हैं कि जिस दिन हमारे दिलों  
 से यह भय निकल गया उसके कुछ समय बाद ही हमें  
 आजादी प्राप्त हो गयी। इसलिये लगभग सब हमारे दिलों  
 से उन्नति तथा आगे बढ़ने के बारे में डंठा हुआ भय  
 निकल जाएगा तो इस बात को अपने दिलों में भी डेर नहीं  
 लयेंगी। इन विषय पर विचार करते समय हमको गांधी  
 जी द्वारा बताया गया वह बात प्याज में रखनी होती जिसमें  
 उन्होंने कहा है कि जब कभी हम किसी तरह के अक्षमंजस

में पढ़ें तो हमें यह सोचना चाहिए कि जो काम हम कर  
 पा रहे हैं उसके हमारे देश के प्रत्येक निवासी और बच्चे  
 लोगों को साम पहुँचेगा या हानि होगी और यदि उन  
 काम को करने से सबको साम पहुँचता है तो हम निश्चित  
 ही यह काम कर देना चाहिए। यही बात आज भारतीय  
 मापात्रों के माध्यम से विज्ञान को पढ़ाने के बारे में  
 साबू होती है। निरक्षर ही भारतीय मापात्रों के माध्यम  
 से सब शिक्षा ही जाएगी तो सभी उसका नाम उच्च संकेतों  
 शिक्षा में प्रयोगों का स्थान

लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि हम उन मापात्रों  
 को न पढ़ें जिनमें आज मुख्य रूप से विज्ञान शिक्षा जा  
 रहा है। आजकल संसार में प्रतिवर्ष 10 लाख के लग  
 भग वैज्ञानिक सेवा 50 हजार वैज्ञानिक पुस्तकें और लग  
 भग इतनी ही वैज्ञानिक रिपोर्ट प्रकाशित होती हैं। हम  
 सब के लिए आवश्यक पर कमी और मजबूती मापात्रों  
 इस्तेमाल की जाती हैं। संसार का 50 प्रतिशत से अधिक  
 वैज्ञानिक साहित्य अंग्रेजी में प्रकाशित होता है। इसी  
 तरह कम से कमभय को हजार परिवारों और 35 हजार  
 नई पुस्तकें प्रतिवर्ष प्रकाशित होती हैं। इनमें से 17  
 हजार पुस्तकें इंडोनिशियन पर और लगभग 8 हजार  
 पुस्तकें इति पर होती हैं। इतने पर भी कम से विज्ञान के



आज से 100 वर्ष पीछे पढ़ गई हैं और इसी कारण  
 कड़ियाँ उनसे अधिक खिपटी हुई हैं। हमारे देश की सामाजिक  
 गरीबी को ज़रूर ख़ास और राकेट जैसे लोकप्रिय शब्दों का  
 भी पता नहीं है। इस तरह हम यदि वैज्ञानिक ज्ञान को  
 अपनी ही भाषा में देने का प्रयत्न नहीं करेंगे तो गरीबी के  
 रूप में देश की बाकी जनसंख्या वैज्ञानिक ज्ञान को नहीं  
 पा सकेगी।

मूर्त रूप बेमे में मय क्यों ?

यह भीज इतनी अनिर्धार्य होमे पर भी इसको हम सोच  
 नापू क्यों नहीं करते इसका कारण शायद यह हो सकता है  
 कि हम प्रपति से डरते हैं। यह बात अजीब सी मय सकती  
 है लेकिन निस्संदेह नहीं। महत्तमा पापी कहते थे कि 'हमें  
 आजादी इसलिए नहीं मिलती क्योंकि हम आजादी से  
 डरते हैं। वह सजी जानते हैं कि जिस दिन हमारे दिलों  
 से यह मय निकल गया उसके कुछ समय बाद ही हमें  
 आजादी प्राप्त हो गयी। इसलिए सम्भवतः जब हमारे दिलों  
 से डरनक्ति तथा भाव बढ़ने के बारे में ईंठा हुआ भव  
 निकल जाएगा तो इस बात को भपताने में भी डेर नहीं  
 लयेगी। इस विषय पर विचार करते समय हमको पापी  
 की ह्राय बतानी पयी यह बात प्यात्र में रखनी होगी जिसमें  
 समझें कि कहा है कि जब कभी हम किसी तरह के असमंजस

में पढ़ें तो हमें यह सोचना चाहिए कि जो काम हम करने का रहे है सबसे हमारे देश के प्रत्येक निवासी और बंचित लोगों को साम पहुँचाना या ज्ञान होना और यदि उस काम को करने से सबको लाभ पहुँचता है तो हम निश्चित ही यह काम कर देना चाहिए। यही बात आज भारतीय भाषाओं के माध्यम से विज्ञान को पढ़ाने के बारे में लागू होती है। निश्चय ही भारतीय भाषाओं के माध्यम से अब विद्या भी जाएगी तो सभी उसका लाभ उठा सकेंगे।

### जिज्ञा में अंग्रेजी का स्थान

लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि हम उन भाषाओं को न पढ़ें जिनमें आज मुख्य रूप से विज्ञान लिखा जा रहा है। आजकल संसार में प्रतिवर्ष 10 लाख के लगभग वैज्ञानिक लेख 50 हजार वैज्ञानिक पुस्तकें और लगभग इतनी ही वैज्ञानिक रिपोर्टें प्रकाशित होती हैं। इन सब के लिए बासतौर पर कमी और अंग्रेजी भाषाएँ इस्तेमाल की जाती हैं। संसार का 50 प्रतिशत से अधिक वैज्ञानिक साहित्य अंग्रेजी में प्रकाशित होता है। इसी तरह कम में-लगभग दो हजार पत्रिकाएँ और 55 हजार नई पुस्तकें प्रतिवर्ष प्रकाशित होती हैं। इनमें से 17 हजार पुस्तकें इंजीनियरिंग पर और लगभग 8 हजार पुस्तकें इति पर होती हैं। इस पर भी कुछ में विज्ञान के

प्रत्येक विद्यार्थी को अंग्रेजी पढ़ना आवश्यक समझा जाता है। यूरोप के सभी देशों में जिनकी भाषा अंग्रेजी नहीं है, वहाँ के विद्यार्थी अंग्रेजी भी पढ़ते हैं। यही बात हमें अपने यहाँ भी लागू करनी चाहिये यानी इसके सिधे विद्यार्थी को अंग्रेजी का इतना ज्ञान आवश्यक हो कि वह अंग्रेजी भाषा द्वारा विज्ञान की जो आधुनिकतम कार्यों प्रवाहित हो रही हैं उनको अच्छी तरह समझ सके। इसके सिधे विद्यार्थी को न केवल हाई स्कूल तक ही अंग्रेजी पढ़नी होगी बरन अंग्रेजी को विश्वविद्यालय स्तर पर भी जारी रखना होगा।

### विश्वविद्यालय और अंग्रेजी

न केवल उच्च वैज्ञानिक ज्ञान के लिए ही विद्यार्थियों को अंग्रेजी पढ़ना आवश्यक है बरन उनको अंग्रेजी का ज्ञान होना इसलिए भी जरूरी है कि आज की हासत में अंग्रेजी द्वारा देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों व शिक्षण संस्थानों और उनके लिए भारत के समस्त विद्यार्थियों और शिक्षकों को जोड़ने का काम किया जा सकता है और जो आज देश की भावनात्मक एकता के लिए अत्यधिक जरूरी है। यह सभी हो सकता है जब के बिना किसी भाषा के एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में जाकर अध्ययन और अध्यापन का कार्य कर सकें क्योंकि सभी देश में स्वस्थ विद्यार्थी का आवागमन प्रधान ही सकता है। यदि हमारे प्रदेश विद्यार्थी के स्वतंत्र

आदान-प्रदान के मार्ग में तनिक भी रोड़े बनने हैं तो  
 संकीर्ण मनोवृत्ति के पनपने का सतर्क और अतिक्र हो  
 सकता है। सच तो यह है कि हमारे विश्वविद्यालयों को  
 सबसे रूप में भावनात्मक एकता के केन्द्र बनना चाहिए और  
 वैसे कि एक पश्चिमी विज्ञान में कहा भी है 'यदि विश्व  
 विद्यालयों को समी प्रकार के समयत विचारों में अलग  
 रहना है और यदि उनको पम मापा और निय के  
 भेदभावों से ऊपर उठकर समी बयों के निये सिद्धय का  
 केन्द्र बनना है—और वैसे उनको सचमुच में होना भी  
 चाहिए—तो उनको अपने इस वर्तम्यों का निडरता के साथ  
 पासन करना जरूरी है क्योंकि सभी व विश्वविद्यालय  
 न केवल संसार को प्रजातंत्र के लिए सुरक्षित बना सकते हैं  
 वरन् प्रजातंत्र को भी संसार के लिए निरापद रख सकते  
 हैं। विश्वविद्यालयों में इस प्रकार के आदेश को वापस  
 करने के लिए यह जरूरी है कि विचारों के आदान-प्रदान  
 के लिए समान माध्यम हो और जिसके बारे में अभी विषये  
 कुछ समय पूर्व अनेक सम्मेलनों में चर्चा हुई है विद्यपत्र  
 मुख्य मंत्रियों के सम्मेलन में और प्रधान मंत्री द्वारा  
 बुलाए गए 'राष्ट्रीय एकता सम्मेलन' में। देश की आज  
 की स्थिति में ऐसा कोई एक समान माध्यम नहीं हो  
 सकता।

आज तो यह बकरी भगता है कि हमारे विश्वविद्यालयों  
 को माध्यम के रूप में ही मापाएँ अपनाती होंगी। पहला  
 माध्यम तो उस प्रवेश की मापा होनी जिसमें वह विश्व  
 विद्यालय स्थापित है और दूसरा माध्यम अग्रणी होना।  
 यह हो सकता है कि इस मठ से सभी लोग सहमत न  
 हों। अनेक इसके विरोध में भी हो सकते हैं। जैसा कि  
 एक विद्वान ने कहा भी है 'हम शिक्षा जपी एक ऐसी  
 गतिशील समस्या को सुलझाने की कोशिश कर रहे हैं  
 जिसका यदि केवल एक शब्द में जर्न करना चाहे तो  
 तो वह विचार ही हो सकता है क्योंकि जिस समाज में  
 विचारों का गतिरोध पैदा हो जाता है वहाँ ज्ञान मंज  
 पड़ने लगता है। इसके विपरीत जिस समाज में अविरोधी  
 प्रेम की वृष्टभूमि में विचारों का 'विचार' और बात  
 प्रति-बात चलता रहता है वहाँ ही ज्ञान और शिक्षा आगे  
 बढ़ती जाती जाती है। यह निश्चित है कि आज पढ़ाने  
 के केवल एक माध्यम से काम नहीं चल सकता। केवल  
 अग्रणी को माध्यम बनाने से यह तो माना कि हम संसार  
 भर में होने वाली प्रवृत्ति और विकास से बराबर सम्पर्क  
 बनाए रख सकेंगे पर इससे हमारी शिक्षण संस्थाएँ और  
 विश्वविद्यालय आम जनता से काफी अलग पड़ जाएँगे

और वे भारतीय संस्कृति की मध्यता को उसके वास्तविक रूप में प्रकट न कर सकेंगे। यही नहीं आम आदमी की जो वास्तविक आवश्यकताएँ हैं उनका दर्शन भी विद्यापियों के दृष्टिकोण में पूरी तरह नहीं उभर पाएगा। किन्तु यदि हम केवल प्राथमिक भाषाओं को ही विश्वविद्यालयों का माध्यम बनाएंगे तो हम आधुनिक युग की वैज्ञानिक शोध में बहुत पिछड़ जाएंगे। क्योंकि आधुनिक शास्त्रों के कारण विज्ञान का इतनी तेजी से विकास हो रहा है कि जब तक मैं सोचें छपकर सामने आती हूँ तब तक वे पुछनी पड़ जाती हैं।

सब तो यह है कि यदि हमें विश्वविद्यालयों और शिक्षण संस्थानों को भारतीय संस्कृति और आधुनिक विज्ञान का संयम स्वतन्त्र बनाना है तो उसके लिए उन्नति क्यों ऐसे रथ का निर्माण करना जरूरी है जिसका एक पहिया प्रवेशीय भाषा हो और दूसरा पहिया अग्रणी हो। इन दो पहियों पर चलकर यह रथ प्रगति के पथ पर आगे बढ़ सकता है। यदि इनमें से एक को भी अलग कर दिया तो यह रथ लड़खड़ा कर गिर पड़ेगा।

## शिक्षा का माध्यम

जाब तो यह बकरी समता है कि हमारे विश्वविद्यालयों को माध्यम के रूप में जो मापाएँ अपनाती होंगी। पहला माध्यम तो उस प्रवेश की मापा होगी जिसमें वह विश्वविद्यालय स्थापित है और दूसरा माध्यम अंग्रेजी होगा। यह हो सकता है कि इस मठ से सभी लोग सहमत न हों। अनेक इसके विरोध में भी हो सकते हैं। जैसा कि एक विद्वान ने कहा भी है 'हम शिक्षा रूपी एक ऐसी गतिशील समस्या को मुलभूतने की कोशिश कर रहे हैं जिसका यदि केवल एक शब्द में अर्थ करना चाहे तो तो वह विचार ही हो सकता है, क्योंकि जिस समाज में विचारों का गतिरोध पैदा हो जाता है वहाँ ज्ञान मर पड़ने लगता है। इसके विपरीत जिस समाज में अविरोधी प्रेम की पृष्ठभूमि में विचारों का 'विचार' और पाठ प्रति पाठ चलता रहता है वहाँ ही ज्ञान और शिक्षा जाने बढ़ती जाती जाती हैं।' यह निश्चित है कि आज पढ़ाने के केवल एक माध्यम से काम नहीं चल सकता। केवल अंग्रेजी को माध्यम बनाने से यह तो भागा कि हम संसार भर में होने वाली प्रगति और विकास से अटकर सम्पर्क बनाए रख सकते हैं पर इससे हमारी शिक्षण संस्थाएँ और विश्वविद्यालय आम जनता से काफ़ी अलग पड़ जाएँगे





## मानव और विज्ञान

इस बात को सभी जानते हैं कि विज्ञान कोई जादू नहीं है। जितना गुड़ डालो उतना ही मीठा होमा' वाली कहावत अन्य लोगों की भाँति वैज्ञानिक क्षेत्र में भी लागू होती है क्योंकि विज्ञान में प्राप्त नतीजे उनका हासिल करने के लिये किये गये प्रयत्नों से सीधे सम्बन्धित होते हैं। साथ ही विज्ञान द्वारा क्या कुछ प्राप्त किया जा सकता है इसकी कोई सीमा भी निर्धारित नहीं की जा सकती। विज्ञान का दृष्टिकोण उसकी विधिवाँ और उसके प्राप्त होने वाले नतीजे सांबन्धित हैं और वे मत-मतान्तरों सम्प्रदायों अथवा धर्मोपदेशी सीमाओं में नहीं बाँधे जा सकते। यही कारण है कि विज्ञान को माने बढ़ाने में प्रत्येक देश के लोगों ने जिसमें हमारा देश भी शामिल है, भाग लिया है और उसको विकसित करने में हाथ बटाया है। उदाहरण के लिए प्रकृति में पाये जाने वाले मौसिक कणों की बात ही लीजिए। ये मूलमूल कण एमोक्योन हों प्रोटोन हों अथवा डूधरे कण हो या तो 'फरमियोन' कहलाते हैं या 'बोसोन' कहे जाते हैं। इन दोनों का नामकरण



## मानव और विज्ञान

दूसरी बात को समझ जानते हैं कि विज्ञान कोई जादू नहीं है। 'जितना कुछ जानो उतना ही मीठ होना' वाली कहावत सम्य लेखों की भाँति वैज्ञानिक क्षेत्र में भी लागू होती है क्योंकि विज्ञान में प्राप्त नहीं है उनको हासिल करने के लिए किसे यत्न प्रयत्नो के साथ सम्बन्धित होते हैं। यद्यपि विज्ञान द्वारा क्या कुछ प्राप्त किया जा सकता है इसकी कोई सीमा भी निर्धारित नहीं की जा सकती। विज्ञान का दृष्टिकोण उसकी विधियाँ और उससे प्राप्त होने वाले नतीजे तार्किक हैं और वे मनु-मनुष्य, सम्प्रदायों अथवा भौतिक सीमाओं में नहीं बाँधे जा सकते। यही कारण है कि विज्ञान को माने बढ़ाने में धर्मिक दृष्टि के लोगों ने जिसमें हमारा देश भी शामिल है भाग लिया है और उसको विकसित करने में हाथ बँटाया है। उदाहरण के लिए प्रकृति में पाये जाने वाले मौलिक कणों की बात ही लीजिए। वे मूलभूत कण एमोस्ट्रॉन हैं प्रोटॉन हैं अथवा न्यूट्रॉन कण हो या तो 'फरमियोन' कहाते हैं या 'बोसोन' कहे जाते हैं। इन दोनों का नामक रूप



इनकी संख्या एक लाख के लगभग है। इसके बर्ष यह रूप कि वैज्ञानिक पत्र-पत्रिकाओं की कुल-संख्या 15 बर्ष है। और यदि इन पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशित होने की यही पति बतली रही तो सन् 2000 ई. में वैज्ञानिक पत्र-पत्रिकाओं की संख्या 10 लाख हो जायेगी।

### दुगम-प्रवृत्ति

आपे किसी बार्से आमतीर पर वैज्ञानिक पति की दुगम प्रवृत्ति निकासने के सिधे काम में लानी जाती है

- (1) प्रतिवर्ष प्रकाशित होने वाले भौतिक अनुसंधान पत्रों की संख्या
- (2) प्रतिवर्ष सङ्कल दुर्बलताओं की संख्या
- (3) प्रतिवर्ष ज्योतिषियों द्वारा सोने पत्रे नये सिधारों की संख्या
- (4) बायुधानों द्वारा प्रतिवर्ष प्राप्त की गई गति
- (5) इस्पात का उत्पादन
- (6) पत्थर कोयले का उत्पादन
- (7) अणुबीजक यंत्रों की दृष्टि क्षमता
- (8) विजली का उत्पादन
- (9) संसार में दृष्टि-उत्पादन के अङ्कित भादि आदि। उपरोक्त सभी पत्राओं की एक समान विशेषता यह है कि ये सभी प्रत्यक्ष रूप से विज्ञान और टेक्नोलोजी से सम्बन्धित हैं।

इस तरह किसी देश या सारे संसार में वैज्ञानिकों की संख्या 10-15 बर्ष में दुगुनी हो जाती है। लेकिन यह बात कवियों राजनीतिकों और संघों के बारे में



की औसत आयु बढ़ गई है। यह माना कि इसका मनुष्य की अधिकतम आयु पर कोई विधेय प्रभाव नहीं पड़ा है जो सम्भवतः विभिन्न युगों से सम्बन्धित है किन्तु मनुष्य की औसत आयु पिछले सैकड़ों वर्षों से बराबर बढ़ रही है। उदाहरण के लिए आज के आधुनिक देशों में केवल इस शताब्दी में मनुष्य की औसत आयु 15 वर्ष बढ़ गई है। क्योंकि विभिन्न देशों में अनुसंधान और विकास पर खर्च होने वाली धनराशि का प्रत्यक्ष अनुपात न केवल राष्ट्रीय आय प्रति व्यक्ति से सम्बन्धित है बल्कि (और वैसे होना भी चाहिए) वह जनजात धिमु की सम्भावित आय से भी सम्बन्धित है। विज्ञान के क्षेत्र में यह बात महत्वपूर्ण है कि पीढ़ी दर पीढ़ी जो ज्ञान एकट्ठा होता है वह धरोहर के रूप में हमें उपलब्ध है। विज्ञान में ऐसा नहीं हो सकता कि प्रसिद्ध ज्वालामुखि विद पाइपापीरस को छोड़कर केवल मार्कमिडीच से ही काम चला लिया जाय या न्यूटन को भुला कर केवल आईस्टीन के सिद्धान्त अपना लिये जायें। पर दूसरे विषयों में जैसे साहित्य में कालिदास के अभाव में शब्दों से भी काम चलाया जा सकता है। सोफोक्लिस की बात न करके भी बरनाई या को रखा जा सकता है। आज वैज्ञानिक ज्ञान की जल्दी जनसंख्या के बढ़ने की प्रति बहुत भीमी है और

वही कारण है कि आज प्रति व्यक्ति वैज्ञानिक पूंजी 100 रुप पहले के मुकाबले में कई गुना अधिक बढ़ गई है।

वैज्ञानिक युग से पहले विश्व की अनेक परम्परा और रीतियों पर आधारित अधिकारों का ही बोलबाला था। किन्तु वैज्ञानिक युग में ज्ञान ने सबसे ऊँचा स्थान प्राप्त कर लिया है और जिसका सामाजिक परिणाम यह हुआ है कि सामन्तवाद को प्रजातन्त्र और मंचसकारी राज्य के सामने फूटन देकरने पड़े।

विज्ञान का एक और भी महत्वपूर्ण पहलु है। पहले जमाने में एक देश दूसरे देश की सहायता या तो राजनैतिक दबाव या कुछ के डर से करता था। इस तरह सहायता देने वाले देश को आर्थिक हानि उठानी पड़ती थी। प्रौद्योगिक लोहा और जमीन के रूप में या कुछ एक देश जाता था उससे दूसरे देश को लाभ होता पड़ता था। किन्तु आज सभी देशों की प्रगति और विकास बहुत कुछ विज्ञान और टेक्नोलॉजी को उपयोग में लाने पर निर्भर करता है। आज एक विकसित देश अपने वैज्ञानिक ज्ञान और तकनीकों की किसी अविश्वसित देश को बहाकर लोहा तो कुछ है ही नहीं उनके निररीत तब देश के इस लोहे में उसे कुछ न कुछ लाभ ही होगा है। यह एक बड़ी दिसम्पन्न बात है कि आज का कोई आधुनिक देश यदि चाहे तो प्रगतिशय प्राप्त करीसकें



की औसत आयु बढ़ गई है। यह माना कि इसका मनुष्य की अधिकतम आयु पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा है जो सम्भवतः विभिन्न नुनों से सम्बन्धित है किन्तु मनुष्य की औसत आयु विभिन्न संकड़ों वयों से बढ़कर बढ़ रही है। उदाहरण के लिए जाप के आधुनिक देशों में केवल इस सतासी में मनुष्य की औसत आयु 15 वर्ष बढ़ गई है। क्योंकि विभिन्न देशों में अनुसंधान और विकास पर खर्च होने वाली समर्पण का प्रत्यक्ष अनुपात न केवल राष्ट्रीय आय प्रति व्यक्ति से सम्बन्धित है बल्कि (और जैसा होना भी चाहिए) वह नवजात शिशु की सम्भारित आयु से भी सम्बन्धित है। विज्ञान के क्षेत्र में यह बात महत्वपूर्ण है कि पीढ़ी दर पीढ़ी का ज्ञान एकद्वय होता है वह बरोहर के रूप में हमें उपलब्ध है। विज्ञान न ऐसा नहीं हो सकता कि प्रसिद्ध ज्यामितिबिध पाइथगोरस को छोड़कर केवल आर्केमिडीज से ही काम चला लिया जाय या न्यूटन को मुला कर केवल आइंस्टीन के विज्ञान अचना लिये जायें। पर दूसरे विषयों में जैसे साहित्य में कालिदास के अभाव में गोपे से भी काम चलाया जा सकता है सांख्यिकीयता की बात न करके भी बरनार्ड शा की रना जा सकता है। आज वैज्ञानिक ज्ञान की अपेक्षा जनसंख्या के बढ़ने की गति बहुत धीमी है और

यही कारण है कि आज प्रति व्यक्ति वैज्ञानिक पूर्वी 100 वर्ष पहले के मुकाबले में कई गुना अधिक बढ़ गई है।

वैज्ञानिक युग पहले विवेक की अपेक्षा परम्परा और रूढ़ियों पर आधारित अधिकारों का ही बोधवासा था। किन्तु वैज्ञानिक युग में काम ने सबसे ऊँचा स्वान प्राप्त कर लिया है और जिसका सामाजिक परिणाम यह हुआ है कि सामन्तवाद को प्रजातन्त्र और ममलकाटी राज्य के सामने घुटने टेकने पड़े।

विज्ञान का एक और भी महत्वपूर्ण पहलु है। पहले जमाने में एक देश दूसरे देश की सहायता या तो राजनीतिक दबाव या युद्ध के डर से करता था। इस तरह सहायता देना बल देना की आर्थिक हानि उठानी पड़ती थी। भौतिक लोगों और जमीन के रूप में या कुछ एक देश पाता या उससे दूसरे देश को हानि भोगना पड़ता था। किन्तु आज सभी देशों की प्रगति और विकास बहुत कुछ विज्ञान और टेक्नोलॉजी को उपयोग में लाने पर निर्भर करता है। आज एक विकसित देश अपने वैज्ञानिक ज्ञान और तरीकों को किसी अविकसित देश को बठाकर रोता तो कुछ है ही नहीं उनके निपरीत मन देना के इस सीरे में उभरे कुछ न कुछ लाभ ही होता है। यह एक बड़ी विलक्षण बात है कि आज का कोई आधुनिक देश यदि चाहे तो प्रगति प्राप्त करीयों

इंजीनियरों और उपकरणों को लेकर एक अविश्वसित देश के विकास में बहुत बड़ा हाथ बटा सकता है। ऐसा करने से उसे भी कोई आर्थिक हानि नहीं पहुँचती। इसलिए आज विज्ञान द्वारा यह सम्भव हो गया है कि सभी देश तेजी से विकसित हो सकते हैं। यदि इन देशों को आगे बढ़ने में आज कोई रकाबट है तो यह राजनैतिक है या मनोवैज्ञानिक।

इस सताम्बी में परमाणु और मौलिक कणों की क्रिया प्रतिक्रिया से सम्बन्धित ज्ञान को समझने में बड़ी प्रगति हुई है। इस क्षेत्र में अजित यह नया अनुभव ज्ञान मीमांसा के लिये महत्वपूर्ण है। क्योंकि परमाणु-अध्ययन एक ऐसा विषय है जिसमें प्रकृति के गम्भीरतम रहस्यों का उद्घाटन होता है। ज्ञान मीमांसा के उपरोक्त तथ्य जिसे इतिहासकार और मानवतावादी बहुत पहले से ही मानते हैं अब मौलिकविदों को भी जानना पड़ रहा है। परमाणु मंडलों का परीक्षणों से प्राप्त विभिन्न व्यवहार के कारण ज्ञान मीमांसा का उपरोक्त अनुभव आज परमाणु प्रक्रिया के बारे में पाया गया है। सत्ताहरण के लिए स्थिति और वैश्व वैश्व सामान्य विचार भी उस समय तक एनोक्लोन पर लागू नहीं किये जा सकते जब तक कि उन पर कुछ विशेष प्रतिबन्ध लगाकर उनकी परिभाषाओं को सीमित न कर दिया गया हो। परमाणु-मौलिकी की

इन विभिन्न स्थिति के बारे में भी नीलबोहर ने बड़ा धोर दिया है और उसे स्पष्ट किया है। यह बात सहस्रक सिद्धान्त (Principle of Complementarity) के माय से जाना जाता है। इस सिद्धान्त में बुद्धिकोण और कार्य प्रकाशी के सिद्धान्त से कुछ बातें ऐसी हैं जो न कबल मानवतावादी और समाज शास्त्रियों के लिए उनके काम में महत्वपूर्ण हो सकती हैं बल्कि जो ऐसे व्यक्तियों के लिए भी लाभदायक हो सकती हैं जो आत्मा की खोज में लगे हुए हैं। यहाँ पर मैं इस बारे में और अधिक बर्णन करने पर मैं केन उपनिषद् और प्रसिद्ध वैज्ञानिक डीराक न इस बारे में जो कुछ कहा है उन विचारों से पाठकों को अवगत कराना चाहूँगा।

डीराक अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "क्वांटम मेकैनिक्स के सिद्धान्त" (Principles of Quantum Mechanics) को भूमिका में लिखते हैं —

इस सदी में वैज्ञानिक धीरे-धीरे की कार्यप्रणालियों के विज्ञान में भारी प्रगति हुई है। भारतीय परम्परा के अनुसार मंदार में बाह्य पराणों (जिन टोन इन्ध्र प्रकाश इत आदि) का एक संगठन मान है और इन बाह्य पराणों के व्यवहार का आशानी से समझने के लिए उनमें सम्बन्धित शक्तियों और पत्र-विज्ञान आदि के बारे में कुछ माध्यमों बना ली गयी है। किन्तु अभी विज्ञान कुछ

समय से इस बात का पता चला है कि प्रकृति कुछ दूसरे ही तरीके से काम करती है। प्रकृति के बुनियादी नियमों के बारे में इस बात को बनाने के सिद्धे हमने जो कास्पनिक बिज बनाये हुए हैं वे प्रत्यक्ष रूप से काम नहीं करते। इसके विपरीत वे एक ऐसे अनचेतन समय का नियन्त्रण करते हैं जिसका कास्पनिक बिज कुछ असंगतियों के बिना नहीं बनाया जा सकता। प्रकृति के इन नियमों को बनाने में सांख्यिक गणित की एक विशेष शाखा Mathematics of Transformations का उपयोग होता है।

साधनिक दृष्टि से उपरोक्त स्थिति काफी संतोषजनक है क्योंकि इसमें दृष्टा को बाह्य पदार्थों को देखने में जो संभक्तियाँ नजर आती हैं उनको प्रवेश कराने में यह जो भाग बचा करता है उसको अधिकारिक मान्यता भी जाती है और प्रकृति के नियमों में एच्छनता का भोग हो जाता है। किन्तु भौतिकी का विद्यार्थी इस स्थिति के सामने बड़े संतोष्य में पड़ जाता है।

ऐसे नये सिद्धान्त यदि कोई उनको मजितीय भूमिका से बिभग करके देखे तो उसे मान्य होना कि ये भौतिकी के ऐसे विद्यार्थों पर आघातित है जिसकी विद्यार्थियों द्वारा अजिद अब तक के ज्ञान द्वारा व्याख्या नहीं की जा सकती और जिनको पूरी तरह से सब्दों में ठीक तरह में

प्यल भी नहीं किया जा सकता। जैम प्रत्यक नवजात का संसार में आने पर बुनियादी बातें सीखनी पड़ती हैं भौतिकी के नवीन विचारों और सिद्धांतों को भी वैसे ही एक समेक काल तक उनका गुण बमों और उपयोगों में परिचित होने पर ही सीखा जा सकता है।”

केन उपनिषद् का इस बुनीती देने वाला वाक्य में ही आरम्भ हुआ है, जिसके आदेश में मस्तिष्क में पूर्ण चेतना आती है जिसके आदेश में नवजात शिशु में जीवन का संसार होता है। संसार में जीव ही ऐसी शक्ति है जिसके कारण मनुष्य बोधता है—ईश्वर ही इन सब कामों पर निगाह रखता है।”

इस उपनिषद् में आगे कहा गया है कि “उनकी दृष्टि उस तक नहीं पहुँच सकती न उनकी वाकपालि और न उनका मस्तिष्क ही उनका बारे में जान सकता है। न तो हम स्वयं जानते हैं और न हम यह बता ही सकते हैं कि उन (मयवान) के बारे में वैसे शिखा दी जाये। क्योंकि वह ‘ज्ञात’ में निग्न है और ‘अज्ञात’ में परे है। हमने तो केवल यह बात प्राचीन विचारकों में ही सुनी है जिन्होंने उनको (मयवान) हमारी समझ की सीमा के अन्दर पहुँचाया है।”

आगे इसी उपनिषद् में कहा गया है “वह (मयवान) जिसके ज्ञात (मयवान) यह नहीं सोचा गया उनको भी

समय से इस बात का पता चला है कि प्रकृति कुछ दूसरे ही तरीकों से काम करती है। प्रकृति के बुनियादी नियमों के बारे में इस जगत को बसाने के लिये हमने जो काल्पनिक चित्र बनाये हुए हैं वे प्रत्यक्ष रूप से काम नहीं करते। इसके विपरीत वे एक ऐसे अचिन्तम अवस्था का नियन्त्रण करते हैं जिसका काल्पनिक चित्र कुछ असमत्तियों के बिना नहीं बनाया जा सकता। प्रकृति के इन नियमों को बनाने में शास्त्रीय गणित को एक विशेष साक्षात् *Mathematics of Transformations* का उपयोग होता है।

शास्त्रीय दृष्टि से उपरोक्त स्थिति काफी सम्शोषक है क्योंकि इसमें दृष्टा को बाह्य पदार्थों को देखने में जो संघटियाँ नजर आती हैं उनका प्रबंध करने में वह जो भाव अदा करता है उसको अधिकारिक मान्यता ही जाती है और प्रकृति के नियमों में एच्छिकता का लोप हो जाता है। किन्तु भौतिकी का विद्यार्थी इस स्थिति के सामने बड़े पक्षोपेक्ष में पड़ जाता है।

ऐसे नये सिद्धान्त यदि कोई एकको गणितीय भूमिका से बिलग करके देखे तो उसे मान्य होगा कि ये भौतिकी के ऐसे विचारों पर आधारित हैं जिसकी विचारधर्मों द्वारा अद्विष्ट अब तक के ज्ञान द्वारा व्याख्या नहीं की जा सकती और जिनको पूरी तरह से समझने में ठीक तरह से

व्यक्त भी नहीं किया जा सकता। जैसे प्रत्येक मनुष्य को संसार में जाने पर बुनियादी बातें सीखनी पड़ती हैं और वेदों के मूल सिद्धांतों और सिद्धांतों को भी बस ही एक समूह काम तक उनके गुण बलों और उपयोगों से परिचित होने पर ही सीखा जा सकता है।

केन उपनिषद् तो इस बुझती देने वाले भाग्य से ही आरम्भ होता है, जिसके आदेश से मस्तिष्क में पूर्ण चेतना आती है, जिसके आदेश से मनुष्य सिद्ध में जीवन का संसार होता है, संसार में कौन सी ऐसी शक्ति है जिसके कारण मनुष्य बोलता है—ईश्वर ही इन सब कामों पर निगाह रखता है।”

इस उपनिषद् में आम कहा गया है कि ‘उनकी दृष्टि उस तक नहीं पहुँच सकती न उनकी वाक्यशक्ति और न उनका मस्तिष्क ही उसके बारे में जान सकता है। न ता हम स्वयं जानते हैं और न हम यह बता ही सकते हैं कि वह (मनुष्य) के बारे में कैसे चिन्ता दी जाये। क्योंकि वह ‘जान’ से मिय है और ‘मज्ञात’ से परे है। हमने तो केवल यह बात प्राचीन विचारकों से ही सुनी है जिन्होंने उनको (मनुष्य) हमारी समझ की सीमा के अन्दर पहुँचाया है।

आगे इसी उपनिषद् में कहा गया है ‘वह (मनुष्य) जिसके द्वारा (मनुष्य) यह नहीं सीखा गया उसको भी



इसका (मगवान्) विचार जाता है और जिसके द्वारा इसका (मगवान्) विस्तार मगन किया गया है इसको यह नहीं जानता। यह (मगवान्) उनको भी बजाठ है जो इसके (मगवान्) बारे में बर्षी करते हैं और जो इसका (मगवान्) विवेचन नहीं करते यह उनके लिए भी विवेचनीय है।”

(श्री अरविन्द द्वारा मनुवाचित)

प्रत्येक मनुष्य जानता है कि आणविक भौतिकी अन्तर्दिष्ट की खोज अणु ब्यूहाणुवैदिकी आधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधान के बड़े रोचक क्षेत्र बन गये हैं। उदाहरण के लिए कहा जाता है कि मनुष्य ने पिछले इस बर्षों में जीवन प्रक्रियाओं के बारे में (जैसे जीन या प्रोटीन की प्रकृति प्रोटीन संश्लेषण आदि) जितना अधिक ज्ञान लिया है उतना कुछ मिनाकर पिछली सम्पूर्ण शताब्दियों में भी यह नहीं जान पाया था और जैसा कि प्रसिद्ध वैज्ञानिक जीनबर्ग ने कहा है (रेलियम साइंस का 21 जुलाई 1961 का अंक)

‘जड़ पदार्थों से जैविक पदार्थों को बनाने और उनके संश्लेषण करने में जितनी प्रगति हुई है उससे कहा जा सकता है कि इस शताब्दी के अन्त तक जितनी सम्भावना मनुष्य के द्वारा यहाँ की सफल परिष्कार की है उतनी ही

सम्मानना वह पदाओं को बेठन पदाओं में बदलने की हो  
सकी है।

यदि हमारा जगत परमाणु युद्ध की ज्वालामुखियों में  
नहीं फँस जाता तो निश्चित ही उपरोक्त दोनों बातों को  
मनुष्य द्वारा मूर्तरूप दिया जा सकेगा। इन सम्मानित  
पटनाओं के निर्माण और मृजन में हम स्वयं क्या भाग  
बहा करते हैं यह बात बुनियादी तौर पर इस पर निर्भर  
करती है कि हमने ज्ञान अर्थन और विश्वास को जीवन में  
कौन सा दर्जा दिया है।





सम्पादना जड़ पराधों को केवल पराधों में बदलने की रा  
बनी है।”

यदि हमारा जगत परमाणु युद्ध का उपायाओं में  
नहीं फँस जाता तो निश्चय ही उन्नोद्य शान्ति कागल का  
मनुष्य द्वारा पूर्णरूप दिया जा सकता। इन सम्पादन  
कटनाओं के निर्माण और मृत्यु में हम स्वयं क्या भाग  
करते हैं यह बात बुनियादी और पर हम पर निर्भर  
करती है कि हमने ज्ञान अज्ञान और मित्रा का जीवन में  
कीन सा दर्श लिया है।

